

जनवरी-मार्च  
January-March

अंक : 94

2018

ISSN : 0976-0024

महिला  
Mahila

# विधि भारती Vidhi Bharati

विधि चेतना की द्विभाषिक (हिंदी-अंग्रेजी) शोध पत्रिका  
Research (Hindi-English) Quarterly Law Journal

(केंद्रीय हिंदी निदेशालय, मानव संसाधन विकास मंत्रालय के आंशिक अनुदान से प्रकाशित)

मुख्य संपादक  
सन्तोष खन्ना

पत्रिका में व्यक्त विचारों से सम्पादक/परिषद् की सहमति आवश्यक नहीं है।

|                          |                                 |
|--------------------------|---------------------------------|
| व्यक्तियों के लिए        | संस्थाओं के लिए                 |
| मूल्य : 100/- रुपए       | वार्षिक मूल्य 500/-रुपए         |
| वार्षिक मूल्य 450/- रुपए | आजीवन संस्था सदस्य 20,000/-रुपए |
| आजीवन सदस्य 5000/- रुपए  | Citation No. MVB-24/2018        |
| डाक खर्च अलग             | वर्ष 24                         |
| अंक 94                   |                                 |



## विधि भारती परिषद्

बी.एच./48 (पूर्वी) शालीमार बाग  
दिल्ली-110088 (भारत)

मोबाइल : 09899651872, 09899651272

फ़ोन : 011-27491549, 011-45579335

E-mail : vidhibharatiparishad@hotmail.com

## ‘महिला विधि भारती’

विधि चेतना की द्विभाषिक (हिंदी-अंग्रेजी) विधि-शोध त्रैमासिक पत्रिका

अंक : अंक-94 (जनवरी-मार्च, 2018)

मुख्य संपादक : सन्तोष खन्ना

### परिषद की कार्यकारिणी

संरक्षक : डॉ. राजीव खन्ना

1. डॉ. सुभाष कश्यप (अध्यक्ष)
2. न्यायमूर्ति श्री लोकेश्वर प्रसाद (उपाध्यक्ष)
3. श्रीमती सन्तोष खन्ना (महासचिव)
4. श्रीमती मंजू चौधरी (कोषाध्यक्ष)
5. डॉ. प्रवेश सक्सेना (सदस्य)
6. डॉ. आशु खन्ना (सदस्य)
7. श्री अनिल गोयल (सदस्य)
8. डॉ. पूरनचंद टंडन (सदस्य)
9. श्री जी.आर. गुप्ता (सदस्य)
10. डॉ. उषा टंडन (सदस्य)
11. डॉ. सूरत सिंह (सदस्य)
12. डॉ. के.एस. भाटी (सदस्य)
13. डॉ. शकुंतला कालरा (सदस्य)
14. डॉ. एच. बालसुब्रह्मण्यम (सदस्य)
15. डॉ. उमाकांत खुबालकर (सदस्य)
16. अनुरागेंद्र निगम (सदस्य)

### प्रदेश प्रभारी

1. प्रो. देवदत्त शर्मा (उत्तर प्रदेश) 09236003140
2. प्रो. (डॉ.) सुरेंद्र यादव (राजस्थान) 09414442947

### परामर्श मंडल

1. श्री एस.पी. सबरवाल
2. प्रो. (डॉ.) गुरजीत सिंह
3. प्रो. (डॉ.) एल.आर. सिंह
4. डॉ. उषा देव
5. प्रो. के.पी.एस. महलवार
6. श्री हरनाम दास टक्कर

## विधि भारती परिषद्

बी.एच./48 (पूर्वी) शालीमार बाग, दिल्ली-110088 (भारत)

फ़ोन : 011-27491549, 011-45579335, मोबाइल : 09899651872, 09899651272

E-mail : vidhibharatiparishad@hotmail.com

## अंक 94 में

|     |  |    |    |
|-----|--|----|----|
| 1.  | आपके विचार / डॉ. योगेंद्र नाथ शर्मा 'अरुण'   | -- | 6  |
| 2.  | संपादकीय   | -- | 7  |
| 3.  | मानव अधिकारों के युग में गरिमापूर्ण जीवन से वंचित स्त्रियाँ /<br>डॉ. सुदर्शन वर्मा   | -- | 11 |
| 4.  | उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम अब नए स्वरूप में / डॉ. प्रेमलता   | -- | 22 |
| 5.  | सरोगेसी कानून : अनसुलझे प्रश्न / डॉ. निरूपमा अशोक  | -- | 25 |
| 6.  | Judiciary be Above Board / <b>Santosh Khanna</b>   | -- | 32 |
| 7.  | महिला अधिकार : वैधानिक प्रावधान / डॉ. साधना गुप्ता   | -- | 37 |
| 8.  | महात्मा गाँधी की प्रासंगिकता / डॉ. सूर्यबाला   | -- | 43 |
| 9.  | Protection of Women Against Domestic Violence /<br><b>Dr. Bal Krishan Chawla &amp; Ms. Shilpa Kwatra Chawla</b>  | -- | 46 |
| 10. | कंपनी में कपट एवं कुप्रबंधन के विरुद्ध<br>'वर्ग कार्यवाही वाद' : एक नया उपचार / विपिन कुमार सिंह   | -- | 52 |
| 11. | गुड-बाय (विज्ञान-कथा) / सुशांत सुप्रिय   | -- | 57 |
| 13. | पाठ याद क्यों नहीं (कविता) / डॉ. उषा देव   | -- | 63 |
| 14. | विधि शिक्षा व्यवस्था में हिंदी भाषा का प्रयोग / डॉ. प्रतिभा चौधरी--  | -- | 60 |
| 15. | राष्ट्रभाषा उत्सव एवं राष्ट्रभाषा गौरव सम्मान 2017 : एक रिपोर्ट / रेनू नूर--   | -- | 64 |
| 16. | National and International Socio-Legal Aspects of<br>Environmental Issues with Special Reference to<br>Climate Change / <b>Vinod Chaudhary</b><br>(पुस्तक समीक्षा) | -- | 67 |
| 17. | समय का सच (काव्य संग्रह) / डॉ. प्रवेश सक्सेना  | -- | 76 |
| 18. | हाइकु / श्रीमती सन्तोष खन्ना   | -- | 82 |
| 19. | भारत की संविधान सभा और भारत की स्वतंत्रता / रमेश चंद्र   | -- | 83 |
| 20. | चक्रव्यूह : एक अध्ययन / प्रो. गगनदीप सिंह  | -- | 88 |
| 21. | On the Flight of A Skylark Trail / <b>Premnath Manaen</b>  | -- | 92 |
| 22. | लेखक मंडल  | -- | 96 |
| 23. | पुस्तक सूची  | -- | 97 |
| 24. | सदस्यता प्रपत्र  | -- | 98 |

## आपके विचार

---

माननीया संपादक महोदया,

मैं आभारी हूँ कि मुझे आपके संपादन में प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका 'महिला विधि भारती' का जुलाई-दिसंबर, 2017 का 'चुनाव संयुक्तांक' प्राप्त हुआ। मैं इस अंक की प्रशंसा इसलिए मुक्त कंठ से करना चाहता हूँ कि आपने संभवतः पत्रकारिता के इतिहास में 'पहली बार' ऐसा सार्थक प्रयास किया है। चुनाव लोकतंत्र का आधार है, इसलिए चुनावों के विषय में अधिकाधिक लोगों को जागरूक किया जाना मेरी दृष्टि में लोकतंत्र की सबसे बड़ी पूजा है।

आपने दो खंडों में चुनाव से जुड़ी प्रामाणिक जानकारीयों से युक्त आलेख प्रकाशित किए। प्रथम खंड में 'चुनाव' से संबंधित सुंदर आलेख बहुत लाभदायक और ज्ञानवर्धक हैं। संविधान के प्रकांडवेत्ता डॉ. सुभाष कश्यप का आलेख 'निर्वाचन प्रणाली और राजनीतिक दल', डॉ. दिनेश बाबू गौतम का आलेख 'भारतीय चुनाव प्रणाली का विश्लेषणात्मक अध्ययन' (ईवीएम के विशेष संदर्भ में) और डॉ. संतोष खन्ना का आलेख 'भारत का चुनाव आयोग' सचमुच बेजोड़ और प्रामाणिक जानकारीयों से परिपूर्ण हैं।

दूसरे खंड की उपयोगिता तो निस्संदेह बहुत अधिक कही जा सकती है, क्योंकि आपने भारत की आत्मा 'हिंदी' को संभवतः प्रथम बार 'चुनाव' संबंधी विमर्श का विषय बनाया है! मेरा आलेख 'लोकतंत्र को शक्ति प्रदान करती हिंदी' आपने पत्रिका में सम्मिलित किया, इसे मैं हिंदी का सम्मान मानता हूँ। डॉ. शिखा कौशिक, सुनील भुटानी, संतोष बंसल और डॉ. उमाकांत खुवालकर के आलेख तो यह प्रमाणित करने के लिए पर्याप्त हैं कि भारत की 'राष्ट्रभाषा' केवल हिंदी ही है। मैं आपको बहुत बधाइयाँ देना चाहता हूँ कि चारों ओर अंग्रेज़ी के वातावरण में आपने भारत की आत्मा 'हिंदी' की प्रतिष्ठा में अभिवृद्धि की है।

-- आपका शुभचिंतक,

डॉ. योगेंद्र नाथ शर्मा 'अरुण' : डी.लिट., पूर्व प्राचार्य एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग,  
74/3, न्यू नेहरू नगर, रूड़की-247667  
E-mail : ynsarun@gmail.com



## संपादकीय

---

जब भारत के प्रधान मंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी विश्व आर्थिक मंच पर अपने उद्घाटन भाषण में भारत की अर्थव्यवस्था के संबंध में और देश के उज्ज्वल पक्षों को ज़ोर-शोर से उजागर कर रहे थे, तभी ऑक्सफाम अध्ययन के आधार पर यह कटु तथ्य भी जनता में हलचल मचा रहा था कि देश में आर्थिक तरक्की के बावजूद गरीबों की हालत में कोई सुधार नहीं हुआ है क्योंकि भारत के एक प्रतिशत अमीर भारतीयों ने पिछले वर्ष में देश में पैदा हुए धन में से 73 प्रतिशत धन हथिया लिया और लगभग 65 करोड़ लोगों के जीवन में रोशनी की कोई लकीर नहीं खींची जा सकी।

यह भी स्पष्ट होता जा रहा है कि उदारीकरण की अर्थव्यवस्था लागू होने के बाद जितनी भी आर्थिक तरक्की हुई है वह अमीरों के हिस्से में आई है और वह पहले से बहुत अमीर हो गए हैं और गरीब और अधिक गरीब बेशक न हुए हों किंतु उनकी स्थिति में कोई विशेष सुधार नहीं हुआ है। आज भी भूख, गरीबी, कुपोषण की समस्याएं वैसे ही मुँह बाए खड़ी हैं और सब को शिक्षा का लाभ भी नहीं मिल पा रहा है।

वैसे यह स्थिति भारत की ही नहीं है पूरे विश्व के सर्वेक्षण में यह तथ्य सामने आया है कि पिछले वर्ष का 82 प्रतिशत धन विश्व के एक प्रतिशत लोगों के पास गया है। ऑक्सफाम के मुख्य कार्यकारी अधिकारी मार्क गोल्डरिंग का कहना है कि विश्व अर्थव्यवस्था का स्वरूप बहुत ग़लत है जो विश्व में असमानताओं को इतने बड़े स्तर पर बढ़ा रहा है। कुछेक अमीरों के हाथों में अत्यधिक धन का एकत्रित हो जाना उज्ज्वल अर्थव्यवस्था का संकेत नहीं अपितु हज़ारों-करोड़ों लोगों की स्थिति बेहतर न बनना इस अर्थव्यवस्था के असफल हो जाने का संकेत है।

“वर्ष 2017 में अरबपतियों की संख्या में भी उछाल आया है। वर्ष 2010 से अरबपतियों की संपदा में छः गुणा वृद्धि हुई है जबकि आमजन की मजूरी में केवल 2 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। देश में अमीर और गरीब के बीच की खाई लगातार बढ़ती जा रही है क्योंकि भारत में वर्ष 2017 में कुल संपत्ति के सृजन का 73 प्रतिशत हिस्सा केवल एक प्रतिशत अमीरों के पास है। भारत में वर्ष 2017 में 17 नए अरबपति बन गए हैं और अब देश में अरबपतियों की संख्या 101 हो गई है तथा अमीरों की संपत्ति 4.89

लाख करोड़ से बढ़कर 20.7 लाख करोड़ हो गई है जबकि 67 करोड़ भारतीयों की संपत्ति में सिर्फ एक प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

एक अनुमान के अनुसार वर्ष 2020 तक भारत में भारतीयों की औसत आयु 29 हो जाएगी अर्थात् ऐसे युवा भारत में अमीर-गरीब में इतना बड़ा अंतर कभी भी शुभ संकेत नहीं माना जा सकता। यह भी कहा जा रहा है कि भारत विश्व में तेज़ी से उभरती एक अर्थव्यवस्था है किंतु इस तेज़ी का लाभ लगभग सभी को मिलना चाहिए न कि देश की धन संपदा कुछेक के हाथ में केंद्रित हो जाए। इस युवा देश की इस बिगड़ती तस्वीर को सही करने के लिए गंभीर विचार विमर्श किया जाना चाहिए।

भारत के संविधान का प्रमुख उद्देश्य भी यह है कि भारत में ऐसी अर्थव्यवस्था बनाना, जिसमें असमानताओं को कम किया जा सके। हमारे संविधान में सर्वप्रथम एक उद्देशिका का समावेश किया गया है जिसे हमारे देश के दर्शन और संस्कृति का प्रतीक और प्रतिबिंब कहा जाता है जिसके तीन उद्देश्यों में एक उद्देश्य यह है कि सभी को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय सुलभ कर व्यक्ति की गरिमा को सुनिश्चित करना है। मूल अधिकारों में भी अनुच्छेद 21 जीवन की गरिमा का गान करता है जिसका अर्थ यह है कि हर व्यक्ति को समान अधिकार मिलें चाहें वह शिक्षा का अधिकार हो, स्वास्थ्य का अधिकार हो या राष्ट्र संपदा में बराबर का अधिकार हो। इन्हीं आदर्शों को आगे बढ़ाते हुए संविधान में समता का मूल अधिकार भी प्रदान किया गया है और राज्य के नीति निदेशक तत्त्वों में अर्थव्यवस्था कैसी हो, इसके बारे में निर्देश दिए गए हैं।

यहाँ संविधान में नीति निदेशक तत्त्वों में से 38 अनुच्छेद को देख लेना समीचीन होगा :--

**38. राज्य लोक कल्याण की अभिवृद्धि के लिए सामाजिक व्यवस्था बनाएगा :** राज्य ऐसी सामाजिक व्यवस्था की, जिसमें सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय राष्ट्रीय जीवन की सभी संस्थाओं को अनुप्रमाणित करे, भरसक प्रयासों से स्थापना और संरक्षण करके लोक कल्याण की अभिवृद्धि का प्रयास करेगा।

राज्य, विशिष्टतया, आय की असमानताओं को कम करने का प्रयास करेगा और न केवल व्यक्तियों के बीच बल्कि विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले और विभिन्न व्यवसायों में लगे हुए लोगों के समूहों के बीच भी प्रतिष्ठा, सुविधाओं और अवसरों की असमानता दूर करने का प्रयास करेगा।

यद्यपि मूल अधिकारों की तरह इन नीति निदेशक तत्त्वों को न्यायालय के माध्यम से लागू नहीं किया जा सकता किंतु यह तत्त्व शासन में मूलभूत हैं और कानून बनाने में

इन तत्त्वों को लागू करना राज्य का कर्तव्य होगा। यद्यपि यह तत्त्व न्यायालय द्वारा लागू नहीं किए जा सकते परंतु न्यायालय ने अपने अनेक विनिर्णयों के माध्यम से इन तत्त्वों को मूलभूत अधिकारों की शक्ति देकर उन्हें लागू करवाने का प्रयास किया है। बल्कि मिनर्वा मिल्स मामले में तो न्यायालय ने यह फैसला दिया था कि “मूल अधिकारों और राज्य के नीति निदेशक तत्त्वों में कोई अंतर नहीं, वे एक दूसरे के अनुपूरक हैं और उनमें समन्वय और सन्तुलन स्थापित करना संविधान का एक आवश्यक कारक है।”

यह सब होते हुए भी और शासन चलाने वाली हर सरकार और राजनीतिक दल संविधान के प्रति आस्था जताते हुए भी पिछले 70 वर्षों में भी इस स्थिति में सुधार नहीं ला पाए। हम देश से गरीबी मिटा नहीं सके परंतु उसमें अधिक कमी भी नहीं ला सके जबकि पहले और अब भी बताया यह जाता है कि सरकार समावेशी विकास करने का प्रयास करती है और अब की सरकार का तो नारा ही है ‘सबका साथ, सबका विकास।’ फिर वर्ष 2017 की स्थिति के बारे में जानकर चिंता होना लाजमी है कि हर प्रयास के बावजूद अर्थव्यवस्था में वह कौन-सी शक्तियाँ हावी हो जाती हैं जो देश के विकास को सभी वर्गों तक पहुँचने नहीं देती बल्कि कुछेक लोग उन साधनों को हथिया लेते हैं और सरकारें ‘अवाक्’ सी खड़ी देखती रह जाती हैं।

अमीरी-गरीबी की खाई पाटने और देश से गरीबी दूर करने के लिए श्रीमती इंदिरा गांधी के प्रधान मंत्री रहते कांग्रेस पार्टी ने भी अथक प्रयास किए थे। उन्होंने इस उद्देश्य के लिए वर्ष 1976 में भारत के संविधान में संशोधन कर उसमें ‘समाजवाद’ शब्द को जोड़ा था ताकि देश में समाजवादी व्यवस्था लाई जा सके। समाजवादी अर्थव्यवस्था का भी मूल आधार यही है कि देश की जनता का समान रूप से विकास हो और देश से गरीबी को कम किया जा सके। इंदिरा गांधी ने भी देश को नारा ही ‘गरीबी हटाओ’ का दिया था परंतु इतने वर्षों तक सत्तासीन रहने के बावजूद देश से गरीबी उन्मूलन तो नहीं हो सका बल्कि अमीरों की संख्या में निरंतर वृद्धि होती गई और होती जा रही है। अस्सी और नब्बे के दशक से वैश्वीकरण के चलते उदार अर्थव्यवस्था के युग का सूत्रपात किया गया। इस अर्थव्यवस्था से देश का विकास होना तो अवश्य आरंभ हुआ परंतु यह अर्थव्यवस्था भी गरीबों की मित्र नहीं निकली, जबकि समझा यह जाता था कि देश में जब विकास होगा तो उसका लाभ सभी को मिलेगा। समाजवादी व्यवस्था में भी भ्रष्टाचार के फनिधरों ने अपना वर्चस्व जमा रखा था और उदारवादी व्यवस्था के चलते भ्रष्टाचार की शक्तियों को और बल मिला जिसके चलते धनी लोग अधिकाधिक धन कमाने लगे परंतु उन्होंने अपना वश चलते उस पर टैक्स देना मुनासिब नहीं समझा या फिर अन्य प्रकार से भ्रष्ट तरीकों से देश के साधनों पर हाथ साफ़ करते रहे। इस कारण

से 2014 में देश ने एक दूसरे राजनीतिक दल को शासन की जिम्मेदारी सौंपी। प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने भारत को भ्रष्टाचार मुक्त करने और गरीबों के कल्याण के लिए अनेक नीतियाँ और योजनाएँ बनाई और ऐसे भी कदम उठाए कि योजनाओं का लाभ सीधे लाभ-भोगियों तक पहुँचे, परंतु आँकड़े दूसरी तस्वीर क्यों पेश कर रहे हैं? शासन को पुनः गंभीरता से सोचना होगा कि और ऐसा क्या किया जाए कि देश का वर्तमान अमीर वर्ग आगे आकर अपने हिस्से का देश के प्रति अपना कर्तव्य निभाए और अपने गरीब देशवासियों के हितों को हड़पने के बजाए उनका हिस्सा छोड़े। इसमें शासन को सख्ती भी बरतनी पड़े तो ऐसा करना देश के हित में ही होगा। जहाँ-जहाँ काला धन अभी भी दबा है, उसे निकालना होगा। इस बात पर भी विचार करना होगा कि देश में और रोज़गार कैसे पैदा किया जाए?

भारत के संविधान के नीति निदेशक तत्त्वों में यह भी कहा गया है कि राज्य सभी व्यक्तियों को, पुरुष और महिलाओं को आजीविका कमाने के पर्याप्त अधिकार प्रदान करेगा तथा साथ ही देश के संपदा संसाधनों का वितरण ऐसा होगा जिससे सबका हित साधन होगा। इन नीति निदेशक तत्त्वों में स्पष्ट कहा गया है कि अर्थव्यवस्था का संचालन ऐसे किया जाए कि जिससे धन और उत्पादन साधनों का कुछेक हाथों में केंद्रीकरण न हो। ताज़ा आँकड़े किस बात की ओर संकेत कर रहे हैं? उपरोक्त संदर्भ में देखें तो कहा जा सकता है कि भारत में संविधान का सही ढंग से अभी भी अनुपालन नहीं हो रहा। भारत का संविधान क़ानून के शासन की व्यवस्था करता है। संविधान को सही अर्थों में लागू करने के लिए हमें नए सिरे से सोचना होगा। जहाँ भी संविधान के प्रावधानों को लागू करने में अभी भी रोड़े हैं, उन्हें हटाना बहुत ज़रूरी है। अर्थव्यवस्था के उज्वल भविष्य के होते हुए भी यदि देश में इतने बड़े स्तर पर ग़ैर-बराबरी बनी रही तो आज का युवा भारत इसे सहन नहीं करेगा। हमारा संविधान हर समस्या के समाधान का रास्ता सुलभ करने में सक्षम है। उसी के अनुसार देश की व्यवस्था के संचालन में युवाओं का कल्याण तो करना होगा, सामूहिक स्तर पर भी इसी में देश की बल्कि अमीर वर्ग की भलाई है। अगर अमीर वर्ग ने वक्त की पुकार नहीं सुनी तो यह उनके लिए भी ख़तरे की घंटी हो सकती है और उन्हें परिणाम भुगतने के लिए तैयार रहना होगा। हमारे देश में समाजवादी लोकतंत्र है और उसी के अनुसार देश की व्यवस्था का संचालन होना चाहिए।

□

डॉ. सुदर्शन वर्मा

## मानव अधिकारों के युग में गरिमापूर्ण जीवन से वंचित स्त्रियाँ

मनुष्य को प्राप्त समस्त अधिकारों में सबसे महत्वपूर्ण गरिमा के साथ जीवन जीने का अधिकार है। अतः मानव अधिकारों अथवा नैसर्गिक अधिकारों का प्रथम लक्ष्य प्रत्येक मनुष्य को मानवीय गरिमा के साथ जीवनयापन करने का अवसर प्रदान करना है। मानव की गरिमा मानव अधिकारों की नींव माना जाता है।

मानव अधिकारों का तात्पर्य उन अधिकारों से है जिनका प्रयोजन प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तित्व का संपूर्ण विकास करना है जिनके उपयोग व उपभोग के बिना किसी भी मनुष्य के व्यक्तित्व का संपूर्ण विकास संभव नहीं है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मानव अधिकारों की उद्घोषणा में स्त्री एवं पुरुष के मध्य कोई भी विभेद नहीं किया गया है। अतः स्त्रियाँ भी समान रूप से मानव अधिकारों का उपभोग कर अपने व्यक्तित्व का विकास करने का तथा गरिमापूर्ण जीवन का अधिकार रखती हैं।

स्त्रियाँ, जो विश्व की समस्त जनसंख्या की लगभग आधी जनसंख्या हैं, सदियों से संपूर्ण विश्व में न केवल सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक न्याय से वंचित रही हैं अपितु लिंग भेद के कारण उन्हें अनेक अलाभकारी स्थितियों में रखा गया है। कभी सामाजिक, आर्थिक, मानसिक एवं शारीरिक शोषण के रूप में, कभी लेखकों के लेखन में, तो कभी मूर्तिकार की मूर्तियों के रूप में वे संपूर्ण विश्व में पुरुष प्रधान समाज के द्वारा प्रताड़ना एवं शोषण का शिकार रही हैं। भेदभावपूर्ण व्यवहार द्वारा जन्म से मृत्यु तक अमानवीय एवं अपमानपूर्ण अपकृत्यों की विषय-वस्तु के रूप में उन्हें गरिमापूर्ण जीवन के समान अधिकार से वंचित रखा जाता रहा है। सदियों से भेदभावकारी नीतियों के दुष्परिणामों से ग्रस्त स्त्रियों को वास्तविकता के धरातल पर पुरुषों के समान गरिमापूर्ण जीवन जीने का अधिकार प्राप्त नहीं हो पाया है। न केवल भारत जैसे विकासशील अपितु विकसित

देशों में भी स्त्रियों के साथ अन्यायपूर्ण, भेदभावकारी नीतियाँ अपनाई जाती रही हैं। वर्तमान में अनेक राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय उपादानों के पश्चात् भी लगभग प्रत्येक राष्ट्र में स्त्रियाँ गरिमापूर्ण जीवन के मानव अधिकार से वंचित हैं।

**स्त्रियों को गरिमापूर्ण जीवन का अधिकार प्रदत्त करने में संयुक्त राष्ट्र संघ की भूमिका**

संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर में मानव अधिकारों की सुरक्षा के लिए उपबंध किए गए हैं। चार्टर की प्रस्तावना में, “मानव के मूल अधिकारों में मानव की गरिमा एवं महत्ता और छोटे-बड़े सभी राष्ट्रों के स्त्री-पुरुषों की समान अधिकारों में आस्था” तथा स्त्री एवं पुरुषों को अवसर की समानता पर बल दिया गया है।

मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा की उद्देशिका में भी मानव की गरिमा को न्याय एवं विश्व शांति के लिए मूलभूत स्तंभ माना गया है। मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा, 1948 का अनुच्छेद (1) सभी मनुष्यों (स्त्री एवं पुरुष) के गरिमापूर्ण जीवन के अधिकार को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्रदान करता है तथा लिंग के आधार पर भेद-भाव को समाप्त कर समानता का अधिकार प्रदत्त करता है। ये उपबंध स्त्रियों को समाज में पुरुषों के समान गरिमापूर्ण जीवन का अधिकार उपलब्ध कराते हैं।<sup>1</sup>

**स्त्रियों के प्रति विभेदकारी क्रियाकलापों को समाप्त करने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ के विशेष उपबंध**

संयुक्त राष्ट्र संघ ने मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा 1948, सिविल एवं राजनीतिक अधिकारों की प्रसंविदा 1966, सामाजिक-आर्थिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों की प्रसंविदा 1966 आदि के द्वारा सभी व्यक्तियों के लिए गरिमापूर्ण जीवन के अधिकार को विश्वस्तरीय मान्यता प्रदान की है। प्रत्येक व्यक्ति को गरिमापूर्ण जीवन का मानव अधिकार बिना किसी भेदभाव के स्त्रियों को भी समान रूप से प्राप्त हैं। गरिमापूर्ण जीवन जीने का अधिकार मात्र शारीरिक एवं सामाजिक गरिमा तक ही सीमित नहीं है अपितु आर्थिक एवं राजनैतिक स्वतंत्रता एवं सुदृढ़ता तक विस्तृत है, जिसमें मतदान करने के अधिकार सहित कार्यस्थल पर भेदभाव रहित मानवीय वातावरण भी सम्मिलित है। अतः उपरोक्त वर्णित अधिकारों की घोषणाएँ एवं प्रसंविदाओं के अतिरिक्त संयुक्त राष्ट्र संघ ने स्त्रियों को समाज में तथा राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर पर गरिमापूर्ण जीवन के समान अधिकार के लिए विशेष प्रसंविदाएँ, अभिसमय, अधिवेशन, एवं सम्मेलन किए हैं। जिनमें से मुख्य हैं --

- स्त्रियों के आर्थिक, राजनैतिक एवं सामाजिक अधिकारों की प्रोन्नति हेतु स्त्रियों की प्रास्थिति पर आयोग, 1946

- अवैध व्यापार तथा अन्य लोगों की वेश्यावृत्ति द्वारा शोषण पर रोक अभिसमय, 1949
- शरीरों के दुर्व्यापार के दमन के लिए दूसरों के वेश्यावृत्ति के शोषण का अभिसमय, 1949
- मतदान के अधिकार सहित स्त्रियों के राजनीतिक अधिकारों पर अभिसमय, 1952
- दासता, दास व्यापार तथा दासता के समान प्रथा तथा संस्था के उन्मूलन का अभिसमय इत्यादि, 1956
- विवाहित स्त्रियों की राष्ट्रीयता का अभिसमय, 1957
- नियोजन एवं आजीविका से संबंधित भेदभाव पर अभिसमय, 1960
- स्त्रियों के विरुद्ध सभी प्रकार के भेदभाव की समाप्ति पर अभिसमय, 1979
- विवाह के लिए न्यूनतम आयु की सहमति पर अभिसमय एवं संस्तुति तथा विवाह का पंजीयन, 1964
- स्त्रियों के विरुद्ध हिंसा के उन्मूलन की उद्घोषणा, 1993 इत्यादि।

इसके अतिरिक्त अंतरराष्ट्रीय श्रम-संगठन ने भी, विशेष प्रसंविदाएँ, अभिसमय, अधिवेशन एवं सम्मेलनों के द्वारा राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्त्री कर्मकारों को कार्यस्थल पर संरक्षण तथा कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न से संरक्षण एवं गरिमापूर्ण वातावरण में कार्य करने के समान अधिकार को उपलब्ध कराने के लिए भी प्रयास किए हैं जिनमें से मुख्य हैं --

- भूमिगत कार्य स्त्री अभिसमय, 1935
- कार्य करने का अधिकार स्त्री अभिसमय संशोधित, 1948
- समान पारिश्रमिक अभिसमय, 1951
- मातृत्व संरक्षण अभिसमय 1919 पुनरीक्षित, 1952
- भेदभाव रोज़गार तथा अधिभोग अभिसमय, 1958
- पारिवारिक दायित्व के साथ कर्मकार अभिसमय, 1981 इत्यादि।

इन समस्त अभिसमयों, प्रसंविदाओं, सम्मेलनों, एव घोषणाओं आदि का प्रथम उद्देश्य स्त्रियों को गरिमापूर्ण जीवन का समान अवसर एवं वातावरण उपलब्ध कराना है। इनके माध्यम से प्रत्येक पक्षकार राष्ट्र पर कर्तव्य अधिरोपित किया गया है कि, वे अपने राज्य क्षेत्र में स्त्रियों के प्रति भेदभावपूर्ण नीतियों का त्याग करेंगे तथा अभिसमयों, प्रसंविदाओं, घोषणाओं, सम्मेलनों आदि को प्रभावी बनाने के लिए विधायी, न्यायिक एवं प्रशासनिक रूप से प्रभावी क़दम उठाएँगे।

**स्त्रियों को गरिमापूर्ण जीवन के अधिकार के संरक्षण में भारतीय संविधान की भूमिका**

भारतीय संविधान की उद्देशिका में भारत के समस्त नागरिकों को सामाजिक,

आर्थिक एवं राजनैतिक न्याय, विचार एवं अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म तथा उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा एवं अवसर की समानता उपलब्ध कराने का लक्ष्य वर्णित किया गया है। भारतीय संविधान के समस्त उपबंधों का स्त्री एवं पुरुष दोनों को समान रूप से लाभ प्राप्त है। भारत की विशेष परिस्थितियों तथा भारत में स्त्रियों के प्रति प्रचलित अनेक कुरीतियों तथा उनकी दयनीय स्थिति को ध्यान में रखते हुए संविधान निर्माताओं ने संविधान में स्त्रियों के हितों के संरक्षण हेतु विशेष उपबंध भी किए हैं। इन संवैधानिक उपबंधों का उल्लेख अनुच्छेद 15(3), 39(क) (घ) (ङ), 42, (इ) 243घ (1),(3), 243-न. में किया गया।

अनुच्छेद 243 न.(2) खंड (1) के अधीन आरक्षित स्थानों की कुल संख्या के कम-से-कम एक-तिहाई स्थान, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और स्त्रियों के लिए आरक्षित रहेंगे।

### **स्त्रियों के गरिमापूर्ण जीवन के अधिकार के संरक्षण में भारतीय संविधियों की भूमिका**

स्वतंत्र भारत में लिखित संविधान के द्वारा प्रत्येक व्यक्ति को समानता का अधिकार<sup>2</sup> प्रदान करने के उपरांत भी स्त्रियों के प्रति विभेदकारी व्यवहार भारतीय समाज के अभिन्न अंग के रूप में अस्तित्व में हैं। अतः संवैधानिक उपबंधों के अतिरिक्त संविधान के अनुच्छेद 15 (3) के अनुसरण में भारतीय संसद ने महिलाओं की दयनीय स्थिति को सुधारने उनके सशक्तिकरण तथा समाज में मानवीय गरिमापूर्ण जीवन जीने युक्त वातावरण उपलब्ध कराने हेतु अनेक अधिनियम-पारित किए हैं। जिनमें से मुख्य हैं: कारखाना अधिनियम 1948, कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम 1948, बागान श्रम अधिनियम 1951, परिवार न्यायालय अधिनियम, 1984, विशेष विवाह अधिनियम 1954, अनैतिक व्यापार (निवारण) अधिनियम, 1956 (संशोधित 1986), सती (निवारण) अधिनियम 1987, बाल विवाह प्रतिषेध अधिनियम 1930 (संशोधित 2006), दहेज प्रथा प्रतिषेध अधिनियम 1961, गर्भ का चिकित्सीय समापन अधिनियम 1971, मातृत्व लाभ अधिनियम 1961 (संशोधित 1995), ठेका श्रम (विनियमन एवं उत्पादन) अधिनियम 1996, समान पारिश्रमिक अधिनियम 1976, आपराधिक क़ानून (संशोधित) अधिनियम 1986 एवं 2013, महिलाओं का अश्लील प्रतिनिधित्व (निषेध) अधिनियम 1981, महिलाओं का घरेलू हिंसा संरक्षण अधिनियम 2005, कार्यस्थल पर महिलाओं का यौनशोषण (रोकथाम, निषेध एवं निवारण) अधिनियम, 2013, राष्ट्रीय महिला आयोग अधिनियम 1993 आदि अनेक विधियाँ पारित की गई हैं।

दंड संहिता 1860, दंड प्रक्रिया संहिता 1973, साक्ष्य अधिनियम 1872, दंड विधि(संशोधन) अधिनियम 2013, हिंदू एवं मुस्लिम वैयक्तिक विधियों आदि में भी स्त्रियों



के गरिमापूर्ण जीवन के अधिकार के संरक्षण के लिए विशेष उपबंध किए गए हैं। स्त्रियों के प्रति बढ़ते गंभीर अपराधों को ध्यान में रखते हुए वर्ष 2013 में आपराधिक क़ानून संशोधन अधिनियम 2013 के द्वारा स्त्रियों की संरक्षा हेतु भारतीय दंड संहिता 1860, दंड प्रक्रिया संहिता 1973 एवं साक्ष्य अधिनियम 1872 में महत्वपूर्ण संशोधन करके स्त्रियों की मर्यादा, नैतिकता, गरिमा, शारीरिक संरक्षण के अंतर्गत समाज तथा पारिवारिक हिंसा तथा सभी प्रकार के यौन उत्पीड़न से सुरक्षा के उपादानों को सुदृढ़ता प्रदान की है। इस प्रकार भारतीय संविधान एवं संविधियों के उपबंध, भारत में स्त्रियों को गरिमायुक्त जीवन का अधिकार उपलब्ध कराने में कवचात्मक भूमिका निर्वहन करते हैं।

### **स्त्रियों के गरिमापूर्ण जीवन के अधिकार के संरक्षण में न्यायालयों की भूमिका**

संवैधानिक एवं विधिक उपबंधों के अतिरिक्त भारतीय न्यायालयों ने भी स्त्रियों को गरिमापूर्ण जीवन का अधिकार प्रदत्त कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। भारत के उच्चतम न्यायालय ने भारतीय संविधान के अनुच्छेद-21 का उदार अर्थान्वयन करते हुए अभिनिर्धारित किया कि “प्राण शब्द से तात्पर्य पशुवत् जीवन से नहीं” अपितु गरिमापूर्ण मानव जीवन से है। प्राण का अधिकार शरीर के अंगों की संरक्षा तक ही सीमित नहीं है जिससे जीवन का आनंद मिलता है या आत्मा बाह्य जीवन से सम्पर्क स्थापित करती है वरन् इसमें मानव गरिमा के साथ जीने का अधिकार भी सम्मिलित है जो मानव जीवन को पूर्ण बनाने के लिए आवश्यक है।<sup>4</sup>

**प्रगति वर्गीज बनाम सिरील जार्ज वर्गीज**<sup>5</sup> के मामले में मुम्बई उच्च न्यायालय की पूर्णपीठ ने भारतीय तलाक अधिनियम, 1869 की धारा 10, 17 एवं 20 को इस आधार पर असंवैधानिक घोषित करते हुए अभिनिर्धारित किया कि इनसे ईसाई धर्म की स्त्रियों के संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन प्रदत्त मानव गरिमा से जीने के अधिकार का उल्लंघन होता है। भारतीय तलाक अधिनियम, 1869 की धारा 10 के अधीन एक ईसाई स्त्री को पति से तलाक लेते समय क्रूरता के साथ-साथ जारकर्म साबित करना भी एक अनिवार्य शर्त है, जो प्रायः कठिन कार्य होता है। न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि धारा 10 पत्नी को ऐसे व्यक्ति के साथ रहने के लिए विवश करती है जिससे वह घृणा करती है जिसने उसके साथ क्रूरता का व्यवहार करके उसे त्याग दिया था ऐसा जीवन पशुवत् जीवन है, यह ऐसे विवाह को विच्छेद करने के अधिकार से इनकार करती है जो विवाह असुधार्य है तथा टूट गया है। विवाह विच्छेद कराने के अधिकार से इनकार करना अनुच्छेद 21 के अधीन प्राप्त प्राण के अधिकार का उल्लंघन है।

**महाराष्ट्र राज्य बनाम मधुकर नारायण**<sup>6</sup> के मामले में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि एक चरित्रहीन स्त्री को भी एकांतता एवं मानव गरिमा के साथ

जीने का अधिकार है, जिससे उसे बिना विधिक प्रक्रिया के वंचित नहीं किया जा सकता है।

न्यायालय ने कहा कि राज्य और गैर-सरकारी स्वैच्छिक संस्थाओं का यह कर्तव्य है कि कलंकित पेशे में स्त्रियों को रोकने का समुचित उपाय करें तथा जो अनैतिक पेशे में चली गई हैं उनकी संतानों को ऐसे पेशे को अपनाने से रोकने के लिए प्रयास करें तथा उनके पुनर्वास का प्रबंध करे, जिससे वे मानव गरिमा का जीवन जी सकें जो हमारे संविधान के अनुच्छेद 21 का लक्ष्य है।<sup>7</sup>

दिल्ली डोमेस्टिक वर्किंग विमेन्स फोरम बनाम भारत संघ<sup>8</sup> के मामले में स्त्रियों के साथ बढ़ते हुए यौन अपराधों के प्रति गंभीर चिन्ता व्यक्त करते हुए न्यायालय ने कहा कि दुर्भाग्यवश स्त्रियाँ हमारे देश में ऐसे वर्ग या समूह से संबंधित हैं, जो अनेक अवरोधों के कारण अलाभकारी स्थिति में हैं और इसीलिए वह पुरुषों की क्रूरता की शिकार होती हैं जिनके साथ संविधान ने उन्हें बराबरी का अधिकार प्रदान किया है। न्यायमूर्ति सगीर अहमद ने कहा कि स्त्रियों के व्यक्तित्व के अनेक पहलू हैं। वह माँ, पुत्री, बहन और पत्नी है। वह पुरुष के हाथ की कठपुतली नहीं है, जैसा कि पत्र-पत्रिकाओं में आजकल दिखाया जाता है। बलात्कार केवल एक स्त्री के विरुद्ध ही नहीं पूरे समाज के विरुद्ध अपराध है अतः इसे रोकने के लिए हमें हर सम्भव प्रयास करना चाहिए।<sup>9</sup>

विशाखा बनाम राजस्थान राज्य<sup>10</sup> के मामले में न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि प्रत्येक नियोक्ता या अन्य व्यक्तियों का यह कर्तव्य है कि कार्य के स्थान या अन्य स्थानों में चाहे प्राइवेट हो अथवा पब्लिक, श्रमजीवी स्त्रियों के यौन उत्पीड़न को रोकें। न्यायालय ने कहा कि किसी वृत्ति, व्यापार या पेशा को चलाने के लिए सुरक्षित काम का वातावरण होना चाहिए। प्राण के अधिकार का तात्पर्य मानव गरिमा से जीवन जीना है। प्रस्तुत मामले में उच्चतम न्यायालय ने श्रमजीवी स्त्रियों के प्रति काम के स्थान में होने वाले यौन उत्पीड़न को रोकने के लिए विस्तृत मार्गदर्शक सिद्धांत विहित किए। न्यायालय ने कहा कि देश की वर्तमान सिविल विधियाँ या आपराधिक विधियाँ काम के स्थान पर महिलाओं को यौन शोषण से बचाने के लिए पर्याप्त संरक्षण प्रदान नहीं करती है और इसके लिए विधि बनाने में काफ़ी समय लगेगा, अतः जब तक विधान मण्डल समुचित विधि नहीं बनाता है, न्यायालय द्वारा विहित मार्गदर्शक सिद्धांत को विधि के रूप में लागू किया जाएगा।<sup>11</sup>

एपारल एक्सपोर्ट प्रमोशन काउन्सिल बनाम ए.के. चोपड़ा<sup>12</sup> के महत्वपूर्ण वाद में न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि कार्य स्थल पर यौन शोषण की प्रत्येक घटना से स्त्री कर्मचारी के अनुच्छेद 21 एवं 14 में प्रदत्त मूल अधिकारों का उल्लंघन होता है अतः

इसे रोकने का पूरा प्रयास किया जाना चाहिए। मानव अधिकारों की अवहेलना के मामले में न्यायालयों को अंतरराष्ट्रीय अभिसमयों, प्रसंविदाओं, सम्मेलनों, एव घोषणाओं के अस्तित्व के प्रति जागरूक रहना चाहिए और उन्हें पूरी तरह से लागू करना चाहिए।

### **भारतीय समाज में स्त्रियों के गरिमापूर्ण जीवन के अधिकार की वास्तविक स्थिति का अवलोकन**

स्वतंत्रता के पश्चात् भारत सरकार के द्वारा स्त्रियों की संरक्षा हेतु किए गए संवैधानिक एवं विधायी, न्यायिक एवं कार्यपालकीय उपबंधों एवं प्रयासों के कारण भारत में स्त्रियों की प्रस्थिति में अभूतपूर्व परिवर्तन एवं सुधार आया है। आज स्त्रियों ने हर क्षेत्र में अपनी दक्षता का परचम फहराया है। भूतपूर्व राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा पाटिल, भूतपूर्व प्रधानमंत्री स्व. श्रीमती इंदिरा गांधी, भारत के उच्चतम न्यायालय की प्रथम महिला न्यायाधीश माननीय श्रीमती एम. फातिमा बीबी, माननीय न्यायाधीश श्रीमती रंजना देसाई, भारत की प्रथम महिला आई.पी.एस. अधिकारी किरण बेदी, प्रथम अंतरिक्ष यात्री कल्पना चावला, चंदा कोचर कार्यकारी निदेशक आई.सी.आई.सी.आई, रंजना कुमार अध्यक्ष नावार्ड, आदि भारत में स्त्रियों की प्रगति का प्रतीक हैं परंतु यह सिक्के का एक पहलू है जो भारत में स्त्रियों के विकास, एव प्रगति का स्वर्णाक्षरों में उल्लेख करते हैं।

परंतु सिक्के का दूसरा पहलू उतना ही वीभत्स है। आज भी भारतीय समाज में स्त्रियों को वो गरिमापूर्ण स्थान प्राप्त नहीं है जिसकी वे नियमतः अधिकारिणी हैं। स्त्रियाँ जो सदियों से सर्वाधिक अन्याय एवं शोषण का शिकार रही हैं, वे भारतीय स्वतंत्रता के 70 वर्षों तथा संविधान के लागू होने के 67 वर्षों के पश्चात् भी उपभोग की वस्तु समझी जाती हैं। राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो की रिपोर्ट के अनुसार स्त्रियों के विरुद्ध अपराध के प्रतिवर्ष डेढ़ लाख मामले दर्ज होते हैं जिनमें से दस प्रतिशत सिर्फ बलात्कार के होते हैं। यह स्थिति ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक शर्मनाक है।<sup>13</sup> राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो की रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2013 में स्त्रियों के विरुद्ध अपराधों के 309,456 मामले दर्ज हुए जिनमें बलात्कार, अपहरण, यौन उत्पीड़न, तस्करी, छेड़छाड़, क्रूरता आदि मामले सम्मिलित हैं। केवल भारत की राजधानी दिल्ली में 1441 बलात्कार के मामले दर्ज हुए। जबकि पूरे देश में बलात्कार के मामलों में 35.2 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। सन् 2014 की एक रिपोर्ट के अनुसार 848 भारतीय स्त्रियाँ प्रतिदिन बलात्कार, शोषण एवं हत्या की शिकार होती है।

यद्यपि राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो की रिपोर्ट के अनुसार 2014 की तुलना में 2015 में स्त्रियों के विरुद्ध अपराधों में कमी देखी गई है परंतु स्त्रियों के विरुद्ध यौन अपराधों में 2.5 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

जीवन के हर क्षेत्र में प्रगति के लिए कदम बढ़ा रही स्त्रियों को पग-पग पर यौन

प्रताड़नाओं का शिकार होना पड़ता है। कार्य स्थल पर यौन शोषण एक सामान्य घटना हो गई है। यौन प्रताड़नाओं के लिए स्त्री की आयु, सामाजिक प्रस्थिति वेशभूषा, इत्यादि कोई महत्त्व नहीं रखती है। मात्र उनका स्त्री होना ही पर्याप्त है। इसलिए बलात्कार का अपराध कुछ माह की बच्ची से लेकर एक बुजुर्ग स्त्री यहाँ तक कि चित्तविकृत स्त्री के विरुद्ध भी किया जा रहा है।

दिसंबर 2012 में, गुजरात विधान सभा चुनाव के पश्चात् पूर्व कांग्रेस विधायक संजय निरूपम ने श्रीमती स्मृति इरानी जी पर अभद्र टिप्पणी करते हुए कहा कि, आप तो टी.वी. पर ठुमका लगाती थी। अभी आपको राजनीति में प्रवेश किए केवल चार दिन भी नहीं हुए, और आप राजनैतिक विश्लेषक बन गईं!

वर्ष 2014 में शक्ति मिल सामूहिक दुष्कर्म मामले के न्यायालय के निर्णय का उदाहरण देते हुए समाजवादी पार्टी के शीर्ष नेता श्री मुलायम सिंह यादव जी ने भी स्त्रियों के प्रति अपनी पुरुषवादी सोच का परिचय देते हुए कहा कि लड़के-लड़के होते हैं : उनसे गलती हो जाती है। उन्होंने यह भी कहा कि, जब लड़की लड़के की दोस्ती समाप्त हो जाती है तब वे बलात्कार की शिकायत करती हैं।

जनता दल नेता शरद यादव ने एक जन सभा को सम्बोधित करते हुए कहा कि वोट का सम्मान एक बेटी के सम्मान से बड़ा एवं महत्त्वपूर्ण है। बेटी का सम्मान केवल एक गाँव अथवा समुदाय को प्रभावित करता है, परंतु वोट के सम्मान के साथ समझौता किया जाता है तो यह पूरे राष्ट्र को प्रभावित करता है। इससे पूर्व 2015 में भी शरद यादव ने एक दक्षिण भारतीय महिला राज्य सभा सदस्य पर अभद्र टिप्पणी करते हुए कहा था कि दक्षिण की स्त्रियाँ काली होती हैं परंतु वे अपने शरीर की तरह ही सुन्दर होती हैं। राजनैतिक नेताओं की घृणित टिप्पणियों में से एक विनय कटियार जी की टिप्पणी है जिसमें उन्होंने स्त्रियों के प्रति अपनी सोच का परिचय देते हुए कहा कि, प्रियंका गांधी उतनी सुंदर नहीं है। हमारी पार्टी में अनेक अन्य बहुत सुंदर महिला प्रचारक हैं।

उपर्युक्त वर्णित प्रतिष्ठित राजनैतिज्ञों के वक्तव्यों के कुछ दृष्टांतों से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि, पुरुष प्रधान इस समाज में आज भी स्त्रियों की गरिमा, प्रतिष्ठा एवं बुद्धिमत्ता का आंकलन उनके रंग एवं शारीरिक सौंदर्य से किया जाता है।

ऐसा माना जाता है कि सामाजिक जागृति, शिक्षा तथा साक्षरता बढ़ने से समाज में स्त्रियों की प्रतिष्ठा एवं सम्मान बढ़ता है और उत्पीड़न कम होता है किन्तु सत्यता यह है कि अनादिकाल से शक्ति का रूप मानी जाने वाली स्त्री, जो समस्त क्षेत्रों में अपनी दक्षता का लोहा मनवाते हुए शिखर पर पहुँच चुकी है, आज भी अधिकांशतः अबला जीवन व्यतीत कर रही है।

भारतीय समाज में परिवार के पुरुष सदस्य जैसे पिता/पति, भाई, मामा, मौसा, चाचा तथा पारिवारिक मित्र आदि स्त्रियों के अधिकारों के प्रथम संरक्षक माने जाते हैं परंतु स्त्रियों के अधिकारों का सर्वाधिक उल्लंघन, शोषण, प्रताड़ना इन्हीं परिजनों एवं मित्रों द्वारा किया जाता है। एक रिपोर्ट के अनुसार भारत में 90 प्रतिशत बलात्कार, पीड़िता के रिश्तेदारों अथवा जानने वालों के द्वारा किए जाते हैं। दिल्ली के महिला अधिकारों के संगठन के सामाजिक शोध सेंटर की निदेशक रंजना कुमारी के अनुसार अजनबियों द्वारा बलात्कार वास्तव में समस्या नहीं है। अधिकतम बलात्कार पीड़िता के जान-पहचान वाले लोगों के द्वारा किए जाते हैं।

प्रत्येक राज्य में व्यक्तियों के अधिकारों के संरक्षण का दायित्व पुलिस को सौंपा जाता है परंतु भारत में ऐसे अनेक मामले सामने आए हैं जिनमें या तो पुलिस स्वयं बलात्कारी एवं उल्लंघनकर्ता होती है अथवा धनाड्य उल्लंघनकर्ता को संरक्षण प्रदत्त करती है।

उपरोक्त तथ्यों की सच्चाई का अनुमान चंद्रिका प्रसाद यादव बनाम बिहार राज्य के मामले में सरकार की नीतियों के क्रियान्वयन एवं उनकी कार्यशैली तथा पुलिस के कार्यों पर उच्चतम न्यायालय के द्वारा की गई टिप्पणी से लगाया जा सकता है, जिसमें न्यायालय ने एक नारी निकेतन गृह से एक लड़की के अपहरण के मामले में शंका व्यक्त करते हुए कहा कि ये देखभाल एवं संरक्षण गृह स्त्रियों एवं लड़कियों के तस्करी गृह बन गए हैं ऐसा लगता है कि राज्य सरकार गरीब स्त्रियों की सुरक्षा करने की अपनी जिम्मेदारी का निर्वाह पूर्ण रूप से नहीं कर रही है। इस प्रकार स्वयं सरकार के संरक्षण में निरूद्ध स्त्रियों की अस्मिता भी सुरक्षित नहीं है। सुचित्रा श्रीवास्तव बनाम चंडीगढ़ एडमिनिस्ट्रेशन इस प्रकार की घटनाओं का ज्वलंत उदाहरण है। जब सरकार एवं सरकारी तंत्र अपने संरक्षण में रह रही स्त्रियों की गरिमा को संरक्षा प्रदत्त करने में असमर्थ हैं तो सामान्य स्त्रियों की स्थिति और भी दयनीय है। ऐसी स्थिति में समस्त संवैधानिक एवं सांविधिक उपबंध तथा मानव अधिकारों का बिगुल बेमानी प्रतीत होता है तथा नारी सशक्तिकरण के समस्त दावे खोखले लगने लगे हैं।

□

### संदर्भ

1. डॉ. शिवदत्त शर्मा, मानव अधिकार विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, भारत सरकार, प्रथम संस्करण, 2006, पृष्ठ 43
2. देखें, भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14, 15, एवं 16 के प्रावधान
3. देखें, मन बनाम इलनायस, 94, यू. एस. 113 (1876).

4. देखें, फ्रांसिस कोरोली मुल्लिन बनाम एडमिनिस्ट्रेटर, यूनियन टेरिटरी ऑफ डेल्ही एंड अदर्स (1981) एस.सी.सी. 608
5. ए.आई.आर. 1997 एस.सी. 349
6. ए.आई.आर. 1991 एस.सी. 207
7. गौरव जैन बनाम भारत संघ, ए.आई.आर. 1997 एस.सी. 3021
8. (1995)1 एस.सी.सी. 14
9. **दिल्ली डोमेस्टिक वर्किंग विमेंस फोरम बनाम भारत संघ** के मामले में उच्चतम न्यायालय ने ऐसे मामलों के शीघ्र परीक्षण एवं ऐसी स्त्रियों को गुजारा भत्ता प्रदान करने तथा उनके पुनर्वास के लिए निम्नलिखित मार्गदर्शक सिद्धांत विहित किए हैं।
  - (1) यौन शोषण के शिकायतकर्ताओं को वकील के रूप में विधिक सहायता दिया जाना चाहिए जो आपराधिक न्याय प्रणाली से भली-भाँति परिचित हों। पीड़ित व्यक्ति को कार्यवाहियों के बारे में पूरी जानकारी देनी चाहिए तथा पुलिस स्टेशन तथा न्यायालय में सहायता ही नहीं देनी चाहिए बल्कि यह भी बताना चाहिए कि, अन्य प्रकार की सहायता कैसे प्राप्त की जा सकती है। जैसे, मानसिक परामर्श या चिकित्सा सहायता आदि। निरन्तरता बनाए रखने की दृष्टि से उसी वकील को मामले को अंत तक निपटाना चाहिए।
  - (2) पुलिस स्टेशन पर विधिक सहायता देना आवश्यक है क्योंकि पीड़ित व्यक्ति वहाँ घबराया रहता है। ऐसे समय अधिवक्ता की सहायता उसके लिए अत्यन्त आवश्यक है।
  - (3) पुलिस को प्रश्न पूछने के पूर्व पीड़ित व्यक्ति को विधिक प्रतिनिधित्व के अधिकार की जानकारी देनी चाहिए और पुलिस रिपोर्ट में इसका उल्लेख किया जाना चाहिए कि, पीड़ित व्यक्ति को इसकी सूचना दी गई थी।
  - (4) पुलिस स्टेशन पर अधिवक्ताओं की सूची होनी चाहिए जो ऐसे मामलों में स्वेच्छा से कार्य करना चाहते हैं जहाँ पीड़ित व्यक्ति का अधिवक्ता उपलब्ध नहीं है या उसे किसी के बारे में जानकारी नहीं है।
  - (5) अधिवक्ता की नियुक्ति पुलिस के आवेदन पर न्यायालय द्वारा यथासम्भव शीघ्र की जाएगी। किन्तु यह सुनिश्चित करने के लिए कि पीड़ित व्यक्ति से विलम्ब किए बिना प्रश्न पूछे जाएँ अधिवक्ता को न्यायालय की पूर्व अनुमति के बिना भी कार्य करने के लिए अधिकार होगा।
  - (6) बलात्कार के सभी मामलों में पीड़ित व्यक्ति की पहचान को गोपनीय रखा जाएगा।
  - (7) अनुच्छेद 38(1) के अधीन नीति निदेशक तत्त्वों को ध्यान में रखते हुए आपराधिक क्षति प्रतिकर बोर्ड का गठन किया जाएगा। बलात्कार से पीड़ित व्यक्ति प्रायः बहुत अधिक वित्तीय हानि उठाता है। इनमें से कुछ तो सेवा जारी करने में असहाय होते हैं।
  - (8) न्यायालय द्वारा पीड़ित

व्यक्ति को प्रतिकर अपराधी के सिद्ध दोष घोषित किए जाने पर प्रदान किया जाएगा तथा आपराधिक क्षतियाँ प्रतिकर बोर्ड द्वारा दी जाएगी, चाहे अपराधी सिद्धदोष घोषित किया गया हो या नहीं। बोर्ड बलात्कार के परिणाम स्वरूप हुए कष्ट, पीड़ा और सदमा तथा गर्भधारण करने के कारण आय में कमी या बच्चे के जन्म पर हुए खर्चे (यदि वह बलात्कार के परिणाम स्वरूप हुई हो) पर विचार करेगा।

10. विशाखा बनाम राजस्थान राज्य ए.आई.आर. 1997 एस.सी.सी. 3011
11. विशाखा बनाम राजस्थान राज्य के मामले में उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित निर्देश दिए -- (1) सभी नियोक्ता या अन्य व्यक्ति जो काम के स्थान के प्रभारी हैं चाहे वह प्राइवेट क्षेत्र में हो या पब्लिक क्षेत्र में, अपने सामान्य दायित्वों के होते हुए स्त्रियों के प्रति यौन उत्पीड़न को रोकने के लिए समुचित कदम उठाना चाहिए। (अ) यौन उत्पीड़न पर अभिव्यक्त रोक लगाना जिसमें निम्न बातें शामिल हैं : -- शारीरिक संबंध और प्रस्ताव, उसके लिए आगे बढ़ना, यौन संबंध के लिए माँग या प्रार्थना करना, यौन संबंधी छींटकशी करना, अश्लील साहित्य या कोई अन्य शारीरिक, मौखिक या यौन संबंधी मौन आचरण को दिखाना आदि। (ब) सरकारी या सार्वजनिक क्षेत्र के निकायों के आचरण और अनुशासन संबंधी नियम या विनियमों में यौन उत्पीड़न रोकने संबंधी नियम शामिल किया जाना चाहिए और ऐसे नियमों में दोषी व्यक्तियों के लिए समुचित दंड का प्रावधान किया जाना चाहिए। (स) प्राइवेट क्षेत्र के नियोक्ताओं के संबंध में औद्योगिक नियोजन (स्टैंडिंग आर्डर) अधिनियम 1946 के अधीन स्टैंडिंग आर्डर में ऐसे निषेधों को शामिल किया जाना चाहिए। (द) स्त्रियों को काम, आराम, स्वास्थ्य और स्वास्थ्य विज्ञान के संबंध में समुचित परिस्थितियों का प्रावधान होना चाहिए और यह सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि स्त्रियों को काम के स्थान में कोई विद्वेषपूर्ण वातावरण न हो, न ही उनके मन में ऐसा विश्वास करने का कारण हो कि वह नियोजन आदि के मामले में अलाभकारी स्थिति में है। (2) जहाँ ऐसा आचरण भारतीय दंड संहिता या किसी अन्य विधि के अधीन विशिष्ट अपराध होता हो तो नियोक्ता को विधि के अनुसार उसके विरुद्ध समुचित प्राधिकारी को शिकायत करके समुचित कार्यवाही प्रारंभ करनी चाहिए। (3) यौन उत्पीड़न की शिकार स्त्री को अपना या उत्पीड़नकर्ता का स्थानान्तरण करवाने का विकल्प होना चाहिए।
12. ए.आई.आर. 1999 एस.सी.सी. 625
13. राष्ट्रीय सहारा, लखनऊ, बृहस्पतिवार, 15 मई, 2005, पृष्ठ 8

डॉ. प्रेमलता

## उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम अब नए स्वरूप में

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम 1986 एक बड़े आंदोलन का परिणाम था जब पहली बार बड़े व्यवसायियों की मनमानी पर अंकुश लगा और उपभोक्ताओं के लिए अलग से क़ानून बन गया। शताब्दियों पुराने क़ानूनों के बीच यह एक ऐसा अधिनियम है जिसमें बड़ी तेज़ी से सुधार हुए और एक आंदोलन की तरह यह बड़े-बड़े क़दमों से नए नए संशोधनों के साथ आगे बढ़ता गया। अपार संभावनाओं के साथ यह बिल कैबिनेट की स्वीकृति प्राप्त कर चुका है और उपभोक्ताओं को इस की प्रतीक्षा है जिसके संसद में पारित होने पर उपभोक्ताओं के लिए एक नए युग की शुरुआत होगी।

यह क़तई आवश्यक नहीं कि व्यवसायी वर्ग इसका स्वागत करें क्योंकि इस क़ानून को पहले भी पर्याप्त विरोध का सामना करना पड़ा था। देर नहीं लगी थी जब बड़े व्यापारियों और प्रोफ़ेशनल (व्यवसायी) तबक़ो में आक्रोश और छटपटाहट का दौर शुरु हो गया था। रेलवे ने अपने रेलवे ट्रिब्युनल स्थापित हो जाने की बात कही तो बैंको ने डी.आर.टी. तथा ओम्बुड्समेन का हवाला देते हुए उपभोक्ता अदालतों के क्षेत्राधिकार को नकारा। सहकारी समितियों ने अपने लिए मध्यस्थता की व्यवस्था को उपयुक्त बताया। शिक्षा संस्थानों ने तो छात्रों को अपने संस्थान का ही अंग मान लिया और प्रश्न उठाया कि हमारा अंग ही हमारे विरुद्ध उपभोक्ता कैसे हो सकता है। डॉक्टर सबसे अधिक कुलबुलाए -- हमारे प्रोफ़ेशन की उपभोक्ता अदालतों के जर्जों को क्या समझ है? हमारी मेडिकल एसोसिएशन अपना काम करती है। कुल-मिलाकर कोई भी उपभोक्ता अदालत के वर्चस्व को स्वीकार करने को तैयार नहीं। यहाँ तक कि उपभोक्ता अधिनियम की अस्मिता को ही चुनौती दे दी गई कि संसद को सिविल कोर्ट के समकक्ष एक नई अदालत खड़ी करने का अधिकार ही नहीं है। उच्चतम न्यायालय ने एक के बाद एक सभी मामलों को ख़ारिज करते हुए यह माना कि देश में विद्यमान अन्य क़ानूनों के साथ



साथ उपभोक्ता के पास वस्तु में दोष या सेवा में कमी होने पर उपभोक्ता अदालत एक अतिरिक्त विकल्प रहेगा। चिकित्सा के क्षेत्र में भी वर्ष 2002 में एक महत्वपूर्ण आदेश उच्चतम न्यायालय ने दिया जिसमें यह स्पष्ट किया कि किसी भी कोर्ट के जज सभी विधाओं में पारंगत नहीं हो सकते। ऐसा यदि होता तो कोई भी अदालत काम नहीं कर सकती। उन्हें जैसे विशेषज्ञों की राय लेने का अधिकार होता है वैसे ही उपभोक्ता अदालतें भी विशेषज्ञ की राय ले सकती हैं। मेडिकल कौंसिल एक अनुशासनिक इकाई की तरह होती है, कोर्ट की तरह काम नहीं करती। वर्ष 2002 में अधिनियम को दी गई चुनौती का भी फैसला हो गया और उच्चतम न्यायालय ने इस अधिनियम को विधि सम्मत बताया। इसी वर्ष 2002 में ही एक बड़ा संशोधन फिर हो गया और उपभोक्ता अदालतों को अपने निर्णय के अनुपालन करवाने के लिए प्रथम श्रेणी के मेजिस्ट्रेट के अधिकार दे दिए गए।

फिर भी समस्याएँ दिन-प्रतिदिन उपभोक्ताओं में बढ़ती जागरूकता और बढ़ते मामलों के साथ बढ़ती गई। अदालतों के समक्ष आने वाली कई समस्याओं पर सरकार और अदालतों के बीच विषद चर्चा पिछले दो वर्षों से होती रही और अंततः नए क़ानून को स्वरूप मिला जो अपने साथ बहुत समाधान लेकर आ रहा है।

1. उपभोक्ता अदालतों में काम करने वाला स्टाफ सभी मंत्रालयों में कभी भी स्थानांतरित हो जाता था। अदालत की प्रक्रिया तथा काम अन्य विभागों से अलग होता है और जब तक कोई कार्मिक काम सीखता है या उसका स्थानांतर हो जाता है। मंत्रालयों के आदेश पर, तुरंत कार्य-मुक्त होने पर दूसरी नियुक्ति कई दिनों तक नहीं हो पाती। नए अधिनियम में प्रावधान के अनुसार उपभोक्ता अदालतों में नियुक्त कार्मिक अन्य मंत्रालयों से अलग उपभोक्ता अदालत के प्रेजिडेंट की निगरानी में काम करेंगे।
2. आदेशों के अनुपालन की स्थिति बड़ी शोचनीय रहती है अब आदेश के अनुपालन के लिए अन्य प्रावधानों के अलावा सिविल कोर्ट में भी भेजा जा सकता है, जो सिविल कोर्ट के आदेश की तरह अनुपालन करा सकेगी।
3. अर्थारिटी का गठन एक महत्वपूर्ण क़दम है जो कई बातों का संज्ञान लेकर कार्यवाही करेगी तथा राष्ट्रीय स्तर की रेगुलेटरी अर्थारिटी होगी। बहुत सारे मसलों में अर्थारिटी को शक्तियाँ प्रदान की गई हैं कि वह उत्पादक के दायित्व, अनुचित व्यापार व्यवहार, भ्रामक विज्ञापन आदि जैसे मामलों को स्वतः ही उठा सके, संबद्ध ट्रेडर/उत्पादक को वारंट कर सके, जाँच कर सकें और उपभोक्ता के हित के प्रतिकूल गतिविधि पाई जाने पर उन्हें समुचित आदेश दे सके, दंड तक दे सकें तथा

अदालत में भी मुद्दा उठा सके। यह भी आदेशों के अनुपालन का एक तरीका होगा।

4. भ्रामक विज्ञापनों के विषय में अर्थॉरिटी के गठन के साथ व्यापक प्रावधान हुए हैं और अब अर्थॉरिटी अपने आप भी इन मुद्दों को उठा कर उत्पादकों, व्यवसायों पर नकेल कस सकेगी और सज़ा के साथ दस लाख तक के आर्थिक दंड के भी प्रावधान किए गए हैं। इसमें जो एक महत्वपूर्ण प्रावधान है वह यह कि उत्पाद का विज्ञापन देने वाला ही नहीं विज्ञापन का चेहरा बनने वाला व्यक्ति भी भ्रामक बात बोलने के लिए दोषी होगा।
5. पिछले एक दशक से ऑन-लाइन खरीद एक बड़ा मुद्दा बना है जिसके लिए उपभोक्ता अधिनियम में अलग से कोई प्रावधान नहीं है। महत्वपूर्ण उपलब्धि ऑन लाइन खरीदारों के लिए यह होने वाली है कि उत्पादकों और उनके उत्पाद बेचने में प्लेटफॉर्म देने वाले, उत्पादक और खरीददार के बीच में मध्यस्थ की भूमिका निभाने वाले की भी ज़िम्मेदारी होगी कि वह अदालत को या अर्थॉरिटी को सभी दस्तावेज़ तथा प्रमाण उपलब्ध कराए। यही नहीं जो कुछ भी उत्पाद के बारे में बताया, छपा या विज्ञापित किया जाएगा उसे अभिव्यक्त वारंटी माना जाएगा और उत्पादक अपने दायित्व से अदालत में या अर्थॉरिटी के समक्ष इनकार नहीं कर सकेगा। इससे पहले उपभोक्ता को ऑन-लाइन खरीद पर खरीद के बाद की वारंटी सेवाएँ नहीं मिलती थी और अदालतों के समक्ष उत्पादक यह कह कर मुक्त हो जाता रहा है कि उसका सामान बेचने के लिए उसने किसी मध्यस्थ को अर्थॉरिटी नहीं दी और सामान उनके ऑथोराइज्ड डीलर से नहीं लिया गया।
6. नए अधिनियम में क्षेत्राधिकार का विस्तार कर दिया गया है और अब उपभोक्ता जहाँ रहता है उस क्षेत्र में स्थित अदालत में भी अपनी शिकायत दर्ज करा सकता है जबकि अब तक उसे विपक्षी के कार्य-स्थल पर ही केस दर्ज कराना पड़ता था।
7. अदालत से बाहर पार्टियों के बीच मध्यस्थता का एक नया अध्याय इस अधिनियम से शुरू होगा। उपभोक्ता अदालतों में लंबित केसों की लंबी सूची को देखते हुए अदालतों के साथ मध्यस्थता केंद्र खोले जाने का प्रावधान किया जा रहा है और अदालत को जिन मामलों में समझौते की संभावना दिखे, उन्हें पहले समझौते के लिए भेजा जा सकेगा।

अपार संभावनाओं के साथ यह बिल कैबिनेट की स्वीकृति प्राप्त कर चुका है और 5 जनवरी को लोक सभा में भी पेश हो चुका है। इसके संसद द्वारा पारित होते ही उपभोक्ताओं के लिए एक नए युग का प्रारंभ होना सुनिश्चित है।

□

डॉ. निरुपमा अशोक

## सरोगेसी कानून : अनसुलझे प्रश्न

संसद में विचाराधीन सरोगेसी (किराए पर कोख देने संबंधी विधि) पर संसदीय समिति ने अपना प्रतिवेदन संसद के सभा पटल पर रख दिया है और आशा की जानी चाहिए कि संसद के आगामी सत्र में इस पर विचार विमर्श होगा। प्रस्तावित कानून के जरिए उन दंपतियों को अपने किसी रिश्तेदार या दोस्त की कोख इस्तेमाल करने की छूट होगी जो स्वयं अक्षम हैं तथा उनके विवाह हुए पाँच वर्ष बीत चुके हैं लेकिन उन्हें संतान सुख नहीं मिल पाया है। प्रस्तावित कानून के द्वारा कोख के व्यावसायिक उपयोग पर पूरी तरह से रोक लगाई गई है। यही नहीं विदेशियों, एकल पुरुष तथा स्त्रियों, समलैंगिकों तथा लिव-इन रिश्तों में रह रहे युगलों को भी इसके दायरे से दूर रखा गया है। दरअसल कानून के द्वारा सिर्फ विवाहित युगलों को सरोगेसी सुविधा उपलब्ध कराने के पीछे विवाह-संस्था की पवित्रता को अक्षुण्ण रखते हुए उन्हें संतान सुख दिलाने की मंशा पूरी हो रही है।

अभी तक सरोगेसी को लेकर भारत में कोई विशिष्ट कानून नहीं है। देश में उन्नत तथा अत्यंत आधुनिक मेडिकल सेवाओं के उपलब्ध होने के कारण पिछले वर्षों में टेस्ट ट्यूब बेबी तथा सरोगेसी का व्यापार प्रायः दो बिलियन डॉलर तक पहुँच गया, बताया जा रहा है कि केवल सरोगेसी के द्वारा पच्चीस हजार शिशु जन्म ले रहे हैं जिनमें अस्सी प्रतिशत विदेशी दंपतियों के हैं। गुजरात, मध्य प्रदेश तथा राजस्थान में ऐसे नर्सिंग होम की बाढ़ आ गई है जो आई.बी.एफ. या इससे मिलती-जुलती तकनीकों से ऐसे व्यक्तियों को संतान सुख दे रहे हैं जो इसके लिए व्यय वहन करने के लिए तैयार हैं। बेकारी और गुरीबी की मार झेल रही बहुत-सी स्त्रियाँ इसके लिए सहमति भी दे रही हैं तथा इससे प्राप्त धन से वे अपने परिवार का भरण-पोषण कर रही हैं। कई स्त्रियों ने तो अपनी कोख पाँच छह बार तक किराए पर दी है, जिससे उनके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव भी

पड़ा है। प्रस्तावित क़ानून में अधिकतम एक बार ही किसी की कोख का अन्योन्य द्वारा इस्तेमाल किया जा सकेगा।

सुरोगेसी संबंधित विधि के न होने के कारण मामले को संविदा अधिनियम तथा अन्य लागू क़ानूनों की परिधि में निपटाया जाता है। दरअसल, सुरोगेसी अनुबंध में तीन पक्षकार होते हैं : एक जैविक (बायोलॉजिकल) दंपति, दूसरी सुरोगेट स्त्री (जिसकी कोख इस्तेमाल की जानी है) तथा तीसरा वह डॉक्टर या नर्सिंग होम जिसके द्वारा यह सब कार्यवाही संचालित होती है। ऐसे क़रार में जननी को निश्चित अवधि तक नर्सिंग होम में ही रहना होता है जिसका खर्च उठाया जाता है, कोख का किराया दिया जाता है तथा चिकित्सक को उसकी सेवा के बदले ऊँची फीस दी जाती है। लेकिन इन अनुबंधों में सबसे कमज़ोर पक्ष वह जननी होती है जिसकी कोख का इस्तेमाल होता है। अनुबंध में प्रावधान रखा जाता है कि यदि कोई जटिलता होती है या शिशु की जान को ख़तरा हो तो शिशु को बचाया जाएगा। एक बहु प्रचारित मामले में गर्भ के आठवें महीने में सुरोगेट स्त्री गिर पड़ी। डॉक्टरों ने जननी की जान बचाने की बजाए ऑपरेशन कर गर्भस्थ शिशु को तो बचा लिया लेकिन स्त्री की मृत्यु हो गई। फिर भी उसके परिवारजन प्रतिकार नहीं पा सके। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि गर्भ के चिकित्सकीय समापन अधिनियम में माँ को बचाने को प्राथमिकता दी गई है।

सुरोगेसी से संबंधित बहुत से मामले न्यायालय की चौखट तक पहुँचे हैं। सन् 2008 में एक जापानी डॉक्टर दंपति ने गुजरात की स्त्री को सुरोगेट अनुबंधित किया तथा उससे एक कन्या का जन्म हुआ, लेकिन इस बीच इस युगल में तलाक हो गया। यह बच्ची माता-पिता विहीन तो हुई ही, राष्ट्रियता विहीन भी हो गई। अंततः उस बच्ची को उसकी दादी माँ ले गई लेकिन उसे नागरिकता नहीं मिली थी। ज्ञातव्य है कि जापान में सुरोगेसी पर प्रतिबंध है। सन् 2012 में एक सिहरन पैदा करने वाला मामला प्रकाश में आया। एक ऑस्ट्रेलियाई युगल ने सुरोगेसी हेतु अनुबंध से पैदा हुए जुड़वाँ बच्चों में से एक को ही स्वीकार किया तथा अपने साथ ले गए। दूसरा शिशु यहीं रह रहा है जो उस स्त्री पर दायित्व बन गया है। इस मामले में एक ऑटो-चालक की भूमिका प्रकाश में आई जिसने स्त्री को मात्र पिचहत्तर हज़ार रुपए दिलाए तथा बिचौलिए और स्वयं ने बड़ी रकम उदरस्थ कर ली। चेन्नई की एक अविवाहित ग़रीब स्त्री के गले में यह शिशु आ पड़ा है। सन् 2014 में दिल्ली में एक स्त्री का बीज (ओवम) प्रत्यावर्तित करते हुए सर्जरी के दौरान मौत हो गई। ऐसे अनेकानेक उदाहरण चर्चा में आए हैं जिनमें सुरोगेट स्त्री को कोई प्रतिकार प्राप्त नहीं हुआ है।

एक अन्य रोचक किस्सा इंग्लैंड का है जिसमें किराए की कोख देने वाली स्त्री ने

उस नवजात शिशु को वापस करने से इंकार कर दिया जिसके लिए गर्भ धारण करने से पूर्व उसने अनुबंध किया था तथा प्रतिफल के रूप में अच्छी खासी रकम ली थी। बताया जाता है कि एक निःसंतान दंपति ने अखबार में विज्ञापन देकर ऐसी स्त्री की दरकार की थी जो किराया लेकर अपनी कोख में दंपति के निषेचित डिंब को धारण करे तथा प्रसूति के छह महीने के बाद शिशु को उसके जैविक माता-पिता को वापस कर दे। लेकिन प्रसवोपरान्त सरोगेट महिला को उस शिशु से इतना भावनात्मक लगाव हो गया कि उसने वह सारा धन ब्याज सहित लौटाने की पेशकश की लेकिन बच्चे को अपने से अलग करने से इनकार कर दिया। मामला अदालत गया लेकिन फैसला जननी माँ के पक्ष में सुनाया गया। अदालत का कहना था कि नौ महीने अपनी कोख में पालने वाली माँ का उस बच्चे पर प्रथम अधिकार है तथा निःसंतान दंपति को ऐसी स्त्री से संविदा भंग के लिए मात्र प्रतिकार पाने का अधिकार है। ऐसी संविदा का विशिष्ट अनुपालन न तो विधिक रूप से संभव है और न ही उचित, क्योंकि स्त्री बीज (ओवम) तथा स्पर्म के अलावा बाकी सब कुछ इसी सरोगेट स्त्री का था। शिशु का बृहत्तर हित भी इसी में है कि उसे अपनी माँ के पास रहने दिया जाए। ऐसे ही एक अन्य रोचक मामले में विवाह-विच्छेद के लिए मुकदमा लड़ रहे दो पतियों ने अपनी पत्नियों की इस माँग को मानने से इनकार कर दिया जिसके द्वारा उन्होंने बिना शारीरिक संबंध बनाए आई.वी.एफ. तकनीक से गर्भवती होने की माँग की थी।

सरोगेसी को लेकर नीति, नैतिकता तथा मर्यादा के कई प्रश्न उलझे हुए हैं। प्रायः प्रत्येक धर्म में विवाह की संस्था पवित्र मानी गई है तथा इससे पैदा हुई संतान को ही वैधानिकता प्रदान की गई है। गर्भपात कराना अवैध ही नहीं अपराध है। संतान उत्पत्ति के नैसर्गिक नियमों में किसी भी रुकावट को मान्यता नहीं है। कई संप्रदायों में नियोग पद्धति द्वारा संतानोत्पत्ति अनुमत है लेकिन यह पुरुषों की नपुंसकता का हल है। स्त्री की प्रजनन क्षमता क्षीण होने पर दूसरी स्त्री से विवाह होता था लेकिन अब यह अवैध है। हिंदू विवाह अधिनियम के द्वि-विवाह पर रोक लगाए जाने वाले प्रावधान को उच्चतम न्यायालय में इस आधार पर चुनौती दी गई थी कि प्रत्येक हिंदू की कपाल क्रिया करने के लिए पुत्र आवश्यक है तथा उसे पुत्र प्राप्ति के लिए दूसरा विवाह करने की अनुमति होनी चाहिए जो उसका धार्मिक अधिकार है, माना नहीं गया था। न्यायालय का कहना था कि यदि किसी हिंदू के पुत्र नहीं हो रहा है तो वह दत्तक ग्रहण कर सकता है लेकिन दूसरा विवाह अवैध होगा।

दरअसल सरोगेसी तकनीक की माँग में इसलिए भी बाढ़ आई है कि अब अक्षम दंपति ही नहीं बल्कि एकल पुरुष तथा स्त्रियाँ, समलैंगिक जोड़े तथा लिव-इन रिश्तों में

रहने वाले युगल गर्भाधान के पचड़े में पड़े बिना संतानोत्पत्ति चाहते हैं क्योंकि मेडिकल साइंस तथा जेनेटिक इंजीनियरिंग ने इसे संभव बना दिया है। विधि की दृष्टि से लिव-इन रिलेशनशिप तथा एकल पुरुष-स्त्री द्वारा संतानोत्पत्ति अवैध नहीं है। कई देशों में लिव-इन रिश्तों को विवाह के समकक्ष मान्यता मिली हुई है। हर स्त्री को अपने शरीर पर पूरा अधिकार है तथा गर्भधारण/गर्भपात उसकी अपनी मर्जी है जिस पर क़ानून रोक नहीं लगा सकता। हाँ, शरीर के व्यावसायिक उपयोग को रोका जा सकता है क्योंकि यह प्रचलित मान्यताओं तथा नैतिकता के विरुद्ध है। वेश्यावृत्ति पर लगी रोक इसी कारण वैध है। कहा जा रहा है कि सरोगेसी भी प्रच्छन्न वेश्यावृत्ति है क्योंकि कोख को किराए पर देना उसी का एक प्रकार है। स्त्री स्वातंत्र्य के पुरोधे इसका पुरज़ोर विरोध करते हैं। उनका कहना है कि यदि पुरुष अपना शुक्राणु बेच सकता है तो स्त्री अपनी कोख क्यों नहीं दे सकती? 'विकी डोनर' फिल्म की कथा वस्तु इसी से मिलती-जुलती है। प्रस्तावित क़ानून के बनने से पहले ही उसकी आलोचना प्रारंभ हो गई है। विदेशी युगलों को अनुमति न देने का तो समर्थन हो रहा है लेकिन अन्यों का नहीं। कई देशों में इस पर पूर्णतः प्रतिबंध है। लेकिन एकल स्त्री पुरुषों तथा लिव-इन रिश्तों को क़ानूनी मान्यता प्राप्त है। यह अभी तक गोद लेकर अपनी इच्छा पूरी करते हैं। जो दंपति सक्षम हैं वे भी इसके द्वारा संतान चाहते हैं। बॉलीवुड के एक पॉपुलर स्टार ने भी इसी प्रकार एक संतान प्राप्त की, जबकि उनके अपने पुत्र-पुत्री हैं। थोड़े दिन पहले एक अनब्याही महिला ने उच्चतम न्यायालय में गुहार लगाई थी कि उसके शिशु को अपनी माँ के नाम के साथ पासपोर्ट जारी किया जाए तथा अधिकारियों को आदेश दिया जाए कि वे शिशु के पिता के नाम बताने पर ज़ोर न दें। न्यायालय ने इसकी अनुमति भी दे दी। ऐसे एकल स्त्री पुरुषों की संख्या बहुतायत में है जो विवाह बंधन में बँधे बिना संतान चाहते हैं। समलैंगिकों की भी पर्याप्त संख्या है जो सरोगेसी के माध्यम से संतानोत्पत्ति चाहते हैं। चूँकि इस पद्धति में बीज/स्पर्म अपना होता है अतः ऐसे बच्चे में अपनेपन का भाव अधिक रहता है। यही नहीं, समय दूर नहीं है जब मानव-क्लोन बनना वास्तविकता हो जाएगी। इसमें भी सरोगेसी तकनीक का सहारा लेना मजबूरी होगी।

भारतीय संविधान में यों तो स्त्रियों को बराबरी का हक दिया गया है तथा कुछ स्थितियों में अतिरिक्त रक्षोपाय भी हैं, लेकिन परिवार तथा विवाह संस्था को बचाए रखने के लिए दंपतियों पर बंधिषें भी हैं। नरगिस मिर्जा के मामले में यह निर्धारित किया जा चुका है कि हर स्त्री को माँ बनने का नैसर्गिक अधिकार है लेकिन यह स्वयं के सुख के लिए होना चाहिए तथा स्वीकार्य मापदंडों के अंतर्गत होना चाहिए। सरोगेसी पर चल रही बहस में नीति, नैतिकता तथा मर्यादा के प्रश्नों के साथ स्त्री स्वातंत्र्य अधिकारों के

मध्य सामंजस्य की माँग की जा रही है।

सुरोगसी क़ानून को लेकर अभी यही प्रश्न तैर रहे हैं। उस शिशु के अधिकारों पर चर्चा नहीं हो रही है जो इस माध्यम से जन्म ले रहा है। वयस्क होने पर क्या उसे अपनी जननी माँ को भरण-पोषण देने के लिए बाध्य किया जा सकेगा या घरेलू हिंसा अधिनियम के अंतर्गत उत्तरदायी ठहराया जा सकेगा, यदि उसके जैविक माता-पिता की मृत्यु हो जाए? क्या जैविक माता-पिता अनुबंध करके उस सुरोगेत को अपनी संपत्ति में हिस्सा देकर बच्चे के अधिकारों पर कुठाराघात कर सकते हैं? यदि स्त्री बीज (ओवम) के साथ-साथ पुरुष शुक्राणु भी एक से अधिक लोगों के लिए जाएँ तो स्थिति और भी जटिल तथा दुरूह हो जाएगी। शिशु की पहचान के संकट के साथ प्रचलित मान्यताओं तथा विधिक प्रावधानों की पुनर्व्याख्या करनी होगी। नागरिकता तथा राष्ट्रियता के प्रश्न भी महत्त्वपूर्ण हैं।

भारत में सुरोगेसी इंडस्ट्री अपने शबाब पर है। इंटरनेट पर खुलेआम ऐसी स्त्रियों के फोटो तथा अन्य जानकारी उपलब्ध है जो अपनी कोख को किराए पर देने के लिए तैयार हैं। शुक्राणु देने वालों के बारे में भी जानकारी उपलब्ध है। गोपनीयता की भी गारंटी दी जा रही है। आई.वी.एफ. तकनीक को विस्तार से समझाया जाता है तथा जोखिम भी बतलाई जाती है। इन सबका खुले आम विज्ञापन किया जा रहा है। आशंका व्यक्त की जा रही है कि यदि इस पर क़ानूनी रोक लगाई गई तो इसमें भी अवैध धंधा फलने-फूलने लगेगा। मानव अंग-प्रत्यारोपण अधिनियम में सिर्फ नज़दीकी रिश्तेदारों/ मित्रों के अंग लेने का प्रावधान है तथा इसके व्यावसायिक उपयोग पर रोक है लेकिन इसमें काला बाज़ार फल-फूल रहा है और कई नामी-गिरामी अस्पताल भी इसमें लिप्त बताए जा रहे हैं। यह एक यक्ष प्रश्न है कि क्या कोई भाभी, बहन या साली अपने देवर/जेठ, भाई या जीजा के लिए अपना गर्भ उधार देने के लिए राजी हो जाएगी? थोड़े दिन पूर्व बरेली से समाचार मिला था कि दो बहनों में एक प्रजनन के लायक नहीं थी तथा दूसरी बहन आई.वी.एफ. से जीजा के शुक्राणु से डिंब को निषेचित कर अपने गर्भ से संतान पैदा करने को राजी थी, लेकिन पत्नी राजी नहीं हुई। गनीमत थी कि बहनों की माँ सक्षम थी और उसी ने अपने दामाद की संतान को जन्म दिया।

हर विवाहित जोड़े की इच्छा अपने शिशु की किलकारियाँ सुनने की होती है, उसके प्रति वत्सलता प्रदर्शित करने में आत्मिक सुख मिलता है, वह बुढ़ापे का सहारा लगता है और परिवार-समाज में एक सम्मान जनक प्रस्थिति की प्रतीति होती है। स्त्रियों को अपने वजूद का सबसे सुखद अहसास माँ बनने पर ही होता है और यह सब आज से नहीं वरन् सृष्टि के प्रारंभ से हो रहा है। प्रत्येक धर्म में शिशु-प्रजनन तथा उसे अपने से अधिक

योग्य और सक्षम बनाने के आदेश हैं और यही हमारी सभ्यता के उन्नत होने के कारण हैं। ईसाई धर्म में बच्चे ईश्वर का उपहार माने जाते हैं जो स्त्री-पुरुष के संसर्ग से प्राप्त किए जाते हैं। मुस्लिमों में कोख को किराए पर देना अनुमत नहीं है क्योंकि गैर-पत्नी के गर्भाशय में किसी पुरुष के शुक्राणु का प्रवेश ही जायता का दोषी बना देता है।

भारतीय धर्म शास्त्र तो इसे दूसरी ही दृष्टि से देखता है। यहाँ हर व्यक्ति जन्म से ही कुछ ऋण लेकर पैदा होता है तथा इनमें से पितृ-ऋण को चुकाने के लिए संतानोत्पत्ति का विधान है। इसके लिए स्त्री-पुरुष का विवाह-संस्कार होना आवश्यक है। ऐसे दंपति द्वारा जात कर्म (जातक के पैदा होते ही) संस्कार के पूर्व गर्भाधान, पुंसवन तथा सीमंतोन्नयन संस्कार किया जाना अपरिहार्य है। शुभ जातक प्राप्ति हेतु काल निर्धारण तक किए जाने के प्रावधान हैं।

पाश्चात्य सभ्यता के सीमंतोन्नयन प्रभावस्वरूप विवाह की संस्था संस्कार से समारोह में परिवर्तित हो चुकी है। जन्म-जन्मांतर का संबंध होने की बजाय आज उसे साथ रहने, सेक्स का आनंद लेने तथा शिशु-प्रजनन हेतु संविदा के रूप में देखा-समझा जा रहा है। विवाह की परंपराएँ भंगुर हो बिखर रही हैं तथा अंतर्जातीय और अंतर्देशीय विवाहों का प्रचलन बढ़ रहा है। यही नहीं समलैंगिक संबंधों को मान्यता मिल रही है तथा एकल अभिभावकत्व वाले स्त्री-पुरुष तथा लिव-इन-रिश्तों में रह रहे युगलों की संतान चाहना टेढ़ी नज़र से नहीं देखी जा रही है। आज के उन्मुक्त बल्कि स्वच्छंद समाज में नीति, नैतिकता और मर्यादा के नए मापदंड स्थापित हो रहे हैं। लेकिन विडंबना यह है कि जब शिशु जन्म का प्रश्न होता है तो हम उसे वैवाहिक संबंधों से होने की शर्त भी थोपने लगते हैं। यह इसलिए क्योंकि ऐसा जातक सिर्फ उस स्त्री-पुरुष की संतान ही नहीं होता बल्कि देश का भावी नागरिक तथा भविष्य का निर्माता भी होता है।

पश्चिम की तरह हमारे देश में सरोगेसी की माँग इसलिए भी बढ़ रही है कि अब यहाँ स्त्रियाँ अल्प आयु में विवाह की बजाएँ कैरियर पर जोर दे रही हैं। स्वाभाविक ही है कि स्त्रियाँ अपने प्रजनन का आदर्श समय उच्च-शिक्षा, नौकरी तथा रोज़गार को दे रही हैं।

सरोगेसी विधेयक को लेकर जितनी बातें आ रही हैं उन सबमे फोकस इसके दुरुपयोग, वैधता, अवैधता चिकित्सकीय सफलता का जोखिम, शारीरिक, मनोवैज्ञानिक तथा भावनात्मक पक्ष पर आधारित है। गर्भपात पर रोक लगाने वाले क़ानूनों को इस आधार पर असंवैधानिक क़रार दिया गया था कि प्रत्येक स्त्री को अपने शरीर पर पूरा हक़ है। सरोगेसी क़ानून शरीर पर हक़ के अधिकार को नियंत्रित या नियमित करता है।



इसमें स्त्री स्वयं में स्वतंत्र या स्वायत्त हुई है या हो सकती है यह अभी सिद्ध नहीं है। जैसे प्रजनन नियंत्रण संबंधी सुरक्षा के साधन वाकई में स्त्री मुक्ति का बड़ा कारण माने जाते हैं।

मातृत्व एक व्यक्तिगत तथा सामाजिक कार्य है न कि व्यापारिक। मानव अंग या उसके अवयव अर्थ प्राप्त करने के साधन नहीं माने जाते। किसी भी स्त्री की निजता उसके जिंसीकरण (कमोडिफिकेशन) करने की इजाज़त नहीं देती। उसकी प्रजनन-क्षमता की बाज़ार में बोली लगाई जाए, किसी को भी स्वीकार्य नहीं होगी। दरअसल यह एक तरह से प्रजनन-दुर्व्यापार होगा जहाँ स्त्रियाँ एक चल-संपत्ति की तरह उपयोग की जाएँगी। अतः व्यावसायिक सरोगेसी की हिमायत तो कतई नहीं की जा सकती। इसी प्रकार विदेशियों के लिए रोक लगाने के उपबंध भी उचित हैं लेकिन लिव-इन-रिलेशनशिप, एकल अभिभावकत्व वाले स्त्री-पुरुषों तथा समलैंगिकों के ऊपर लगाए जाने वाली रोक उस दक्कियानूसी सोच की उत्पत्ति है जिसमें शिशु-प्रजनन सिर्फ विवाह का उत्पाद समझा जाता है।

प्रस्तावित क़ानून में वैवाहिक जोड़ों को भी सरोगेसी का सहारा लेने के लिए अपने किसी नज़दीकी रिश्तेदार का द्वार खटखटाना पड़ेगा वह भी 21-35 वर्ष के आयु वर्ग में से। ऐसे रिश्ते में सामान्यतः बहन, साली, भाभी ऐसे संबंध होंगे जो असंभव नहीं तो अत्यंत मुश्किल से उपलब्ध होंगे और जो मिलेंगे भी उनमें धनाढ्य रिश्तेदार होंगे जो उसके परिवार का भला करने का अहसान जताने से नहीं चूकेंगे। कहने को तो परिवार के मूल के रूप में परिवार की इज़्ज़त घर में ही रहेगी, लेकिन इसमें धन या संपत्ति का चल या अचल रूप में आदान-प्रदान नहीं होगा, यह सुनिश्चित करना आसान नहीं होगा।

उपर्युक्त तथ्यों और समाज एवं व्यक्ति सापेक्ष सत्यों के आलोक में सरोगेसी के प्रस्तावित क़ानून को वर्तमान परिप्रेक्ष्य में और प्रगतिशील बनाने की आवश्यकता है।

□

Santosh Khanna

---

## **Judiciary be Above Board**

The Supreme Court not only administer justice between the citizens and citizens but also between states and the citizens in addition to ensuring interpretation of the Constitution in right earnest. To perform this stupendous task, we need a judiciary which should be independent, impartial, incorruptible having courage and conviction to do the right as defined by law. The judges of the Supreme Court and the various High Courts take the oath to perform their duties without fear and favour or ill-will, the most important qualities of a Supreme Court judge is his impartiality and integrity.

During the last 70 years after independence, the Supreme Court has generally been considered to be an impartial body in which the people of the country have utmost faith. Sometimes, some allegations of corruption are heard against some judges but generally, these are not investigated and in a few cases, where investigated, these allegations did not result in impeachment of the person for one or the other reason. In the case of Justice V. Ramaswami, though the allegations were proven, the Government of the day (Congress Government) saved this corrupt judge from impeachment by abstaining voting in Lok Sabha. Had they voted, the then Chief Justice of the Punjab and Haryana High Court would have been impeached and removed sending a message that there is zero tolerance in respect of corruption in public life.

As is well known, the Supreme Court judges are appointed by the President but in actual practice, the appointment of judges to SC and High Courts are being recommended by a collegium comprising Chief Justice of India and the four senior most Supreme Court judges.

During the last many decades, the Collegium is appointing judges virtually as the President is bound by the recommendations of the Supreme Court Collegium. In case, the President does not agree in respect of any

names of judges recommended by the collegium, he can ask the collegium to reconsider its recommendation. If the collegium again recommend the same name, the President has to appoint that judge as he has no other option to do anything to the contrary.

The Collegium has been doing the work of recommending the names of judges to be appointed to the Supreme Court and the various High Courts as also the transfer of judges from one High Court to another High Court. The Collegium has also come under cloud and the persistent criticism of Collegium led to Parliament to amend the Constitution and to pass an enabling law for an affective alternative to the SC Collegium. The Parliament amended the Constitution and made the law on the last day of 2014. The amendment changed several provisions of the Constitution requiring the proposed National Judicial Appointment Commission to recommend the appointment of Supreme Court and High Court judges and transfer of High Court judges from one High Court to another High Court. But the amended provisions and the supportive law was challenged in the Supreme Court. A bench of five judges including justice Chelmeshwar invalidated these provisions by a majority of 4 to 1 on the ground that the amendments and National Judicial Commission Act undermined the primacy of the Chief Justice of India and independence of the judiciary.

So, still the judges are being recommended and appointed by the Supreme Court Collegium. So, when the four senior most judges Justice J. Chelmeshwar, Justice Ranjan Gogoi, Justice Lokur and Justice Kurian held a Press Conference alleging that everything is not well in the working of the highest court, the people and the media was taken aback at such an unbecoming behavior of these judges. It looks like a family feud which should have been sorted out within the Institution.

In the Press conference, the four judges publicly criticized Justice Dipak Mishra, the Chief Justice of India for his style of administration and the allocation of cases. Their contention was that several senior judges in the court are being ignored while setting up benches to hear important cases having national bearing. It seems that the conflict seems to be between pro-and anti Modi forces. Otherwise, casting of aspersions on the abilities of some judges to whom the Chief Justice of India is alleged to have allotted cases would not have risen. The way a parliamentarian of a political party rushed to meet Justice Chelameshwar at his residence and a political party rushed to the Press on these judges give credence to the controversy that there is something more than meets the eye.

Justice Dipak Mishra was appointed the Chief Justice of India as per the long established convention of appointing a senior judge as Chief justice of India. The practice is that the Chief Justice of India at the time

of retirement recommends the name of the judge who is next to him to be the next Chief Justice of India. The rule of seniority has always been observed in the appointment except on two occasions when Smt. Indira Gandhi was the Prime Minister and some judges were superceded to appoint Chief Justice of India. Then the affected judges of the Supreme Court resigned in protest. So, the Justice Dipak Mishra was appointed Chief Justice as per the settled convention of seniority.

The trigger for the four senior most Judges to hold Press Conference was Justice Loya's death case which was allotted to Justice Arun Mishra who happened to occupy the 10<sup>th</sup> position in order of seniority of Supreme Court Judges. There were other cases also, such as medical case, judges appointment case and as also the Aadhar Card case in which none of these four judges were included in the Benches.

In the letter written to the Chief Justice of India by these four judges two months before their Press Conference their contention is that 'the convention of recognizing the privilege of the Chief Justice of India to form a roster and assign cases to different members/benches of the Court is a convention devised for a disciplined and efficient transaction of business of the Court but not a recognition of any superior authority, legal and factual, of the Chief Justice over his colleagues. It is too well settled in the jurisprudence of this country that the Chief Justice is only the **first among the equals nothing more or nothing less.**' It is very strange that even after 70 years of India's independence, neither a complete system of appointment of judges and their transfers have so far been evolved effectively nor the powers of the Chief Justice of India have been clearly defined. At present, the practice of appointment of judges by a collegium comprising the Chief Justice of India and four senior most judges has not been generally above board and on many occasions, the system has been criticized. Has it not been the case, the Parliament would not have amended the Constitution and enacted a law for a National Judicial Appointment Commission. The constitutional amendment as well as the supporting enactment relating to NJAC were challenged and the Supreme Court invalidated both these saying that these provisions affect the independence of judiciary. The 99<sup>th</sup> constitutional amendment and the supporting enactment were not only passed by both Houses of Parliament and ratified by the 16 states legislatures of the country but also received the Consent of the President Shree Pranab Mukherjee and these provisions were also enforced, on 13<sup>th</sup> April, 2015.

The National Judicial Appointment Commission seemed to be a sound proposition as the appointment of judges was to be done by a Commission consisting of Chief Justice of India (Chairman) and two other senior most

judges of Supreme Court, the Union Law Minister and two eminent persons. These two eminent persons were to be nominated by the Chief Justice of India, Prime Minister of India and the leader of Opposition Party in Lok Sabha. It was also provided that while nominating these two persons, one person among them has to be from Scheduled Castes or Scheduled Tribes or OBCs or Minority Community or a Woman. As for the appointment of the Chief Justice of India, the Commission shall recommend the name of the senior most judge of the Supreme Court for appointment as chief justice of India. But the Supreme Court held it unconstitutional saying that it is against the independence of judiciary which is a basic feature of the constitution. It means that judiciary does not want any role of the Executive in this field. If we look at the composition of this National Commission, it seemed to be very broad based and even it tilted towards the primacy of judiciary as it had Chief Justice and two other senior most Judges of the Supreme Court, with other provision giving primacy to these three functionaries. The composition of the Commission seemed most democratic as it will include two eminent members including one from SC/ST/OBC/Minority/Women. The SC collegium which is doing this work at present has absolute power and when the power is absolute, it tends to be misused and that is why collegium system is always being criticized as is being alleged that the judges always come from only from a few families of the country insinuating that all is not well with this method of appointment and transfer of judges and even Justice J. Chelmeshwar has been criticizing the collegium system and he even gave dissenting judgement and upheld these provisions i.e. he was in favour of National Judicial Appointment Commission.

As far as the powers of Chief Justice are concerned, he may be first among equals as far as in the matter of hearing of cases and writing of judgements as he cannot influence the vision of other judges hearing cases with him, but it cannot be denied that he is a master of rosters. If he had no extra powers than the other senior judges, the provision of this office in the Constitution seems infructuous. Even if his status in the Constitution has not been defined, but it goes without saying that the Office of Chief Justice of India has been entrusted with extra responsibilities than those of the other senior judges. When he co-ordinates the work of this highest body of Justice, by allotting the cases and creating the benches, it can be a view of a particular judge or judges that the present Chief Justice of India is allotting cases 'selectively' but it may not be true as he may be doing his work according to his vision and not necessarily with ulterior motives whereas the senior judges may be having their views subjectively. This view may be due to many reasons, one view can be that

these judges being seniors are thinking too much of their seniority meaning thereby that junior judges do not have that merit as they have. That is why when Justice Arun Mishra was allocated a particular case and these senior judges pointed out about that case in Press Conference. Justice Arun Mishra was hurt saying that his image is tarnished and he referred back that case to the Chief Justice of India.

The Chief Justice has rightly denied all these imputations but it is also being stated that he has studied the roster system of the High Courts and decided to bring in more transparency in the roster system. Every system is always subject to improvement but that does not mean that the person be blamed on surmises. All said, it is also a fact that nobody should use his powers arbitrarily and with ulterior intent.

But one thing is there which should also be discussed. Whether in the name of independence of judiciary, the whispers of judicial corruption should be overlooked. The death of Justice Loya case is being heard at present by a Three-member Bench with Chief Justice of India heading the bench and it should be hoped that the real truth about the death of Justice Loya will come out in due course. There is a medical college case in which it is being said that in the Odisha medical admission scam, the role of senior judicial officers need to be investigated. If a CBI has mentioned illegal gratification of a judge in its preliminary inquiry, the case should be fully investigated to know the truth. The authority, whosoever be high, should not be given a shield of independence in case of suspected corruption. The judiciary is integrity is very important and it should be safeguarded at any case.

□

डॉ. साधना गुप्ता

## महिला अधिकार : वैधानिक प्रावधान

भारतीय संस्कृति में सृष्टिकर्ता की अवधारणा अर्द्धनारीश्वर के रूप में की गई जो स्त्री-पुरुष के समान अधिकार एवं कर्तव्यों का बोध करवाती हैं। इसका प्रमाण वैदिक काल में उपलब्ध होता है। तब अपने जीवन साथी के संग कदम से कदम मिलाती हुई स्त्री प्रत्येक परिस्थिति में सहभागी बनती थी। मंडन मिश्र की पत्नी शारदा देवी ने तो पति को शास्त्रार्थ में पराजित होते देख स्वयं शंकराचार्य से शास्त्रार्थ कर विद्वता के क्षेत्र में अपना परचम फहराया। परंतु अपने दिव्य गुण मातृत्व के कारण वेदों में ब्रह्म से भी उच्च पद की अधिकारिणी मानी गई नारी मातृत्व के बोझ तले दब कर शनैः-शनैः घर की चारदीवारी तक सीमित होती गई। परिणामतः आर्थिक उत्पादन के साधन एवं शिक्षा से भी वंचित होती गई। अंगों की कोमलता को उसकी शक्तिहीनता के रूप में आँका गया और सौंदर्य एवं शील की रक्षार्थ उसे चारदीवारी तक सीमित कर दिया गया जिससे नारी की स्वतंत्र विचारधारा एवं अधिकार बीते युग की बात हो गई।

पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था में यह स्थिति बद से बदतर होती चली गई। पतन का यह ग्राफ बढ़ता ही जा रहा था जिस पर राजाराम मोहन राय की दृष्टि गई। उन्होंने 1828 में ब्रह्म समाज की स्थापना कर महिलाओं की स्थिति में सुधार के प्रयास किए एवं बाल-विवाह, बहु-विवाह, उत्तराधिकार में अधिकार प्राप्ति विषयों को व्यावहारिक धरातल पर उठाते हुए 'वामा बोधनी' नामक पत्रिका का प्रकाशन प्रारंभ किया।

“मैं अपनी झाँसी नहीं दूँगी” के दृढ़-निश्चय के साथ 1857 में रानी लक्ष्मीबाई द्वारा किया गया स्वतंत्रता का प्रयास रंग लाया। स्वाधीनता के संघर्ष में अपने आधे अंग के जंग-जर्जरित रूप का एहसास प्रथम बार पुरुष प्रधान समाज को हुआ। परिणामतः सुधार के लिए प्रार्थना सभा, आर्य समाज इत्यादि की स्थापना हुई, कई वैधानिक प्रावधान किए गए।

1872 में 'सिविल मैरिज एक्ट' पास किया गया जिसमें विवाह हेतु लड़की-लड़के की आयु क्रमशः 14 एवं 18 वर्ष निर्धारित की गई। प्रार्थना सभा 1867 द्वारा 1869 में बाम्बे वीडोज रिमैरिज एसोसिएशन की स्थापना की गई और इसी वर्ष प्रथम पुनर्विवाह करवाया गया। आर्य समाज द्वारा जाति प्रथा उन्मूलन, स्त्री-पुरुष हेतु शिक्षा, क़ानून व बाल-विवाह निषेध इत्यादि पर बल दिया गया। 1916 में पूना एवं बंबई में प्रथम महिला विश्वविद्यालय की स्थापना 'श्रीमती नथीबाई दामोदार ठाकरे विमंस यूनिवर्सिटी' नाम से हुई। यह दक्षिणी पूर्वी एशिया का प्रथम महिला विश्वविद्यालय था। 1916 में ही भोपाल की बेगम 'सैयद अहमद ख़ॉं' ने अपने कुछ साथियों के साथ अखिल भारतीय मुस्लिम महिला समझौते का सूत्रपात कर बहु-विवाह उन्मूलन के प्रयास किए।

1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के बाद 1889 में बंबई अधिवेशन में दस महिलाओं द्वारा भागीदारी की गई थी, जो नाकाफ़ी थी। स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की अहम् भूमिका के बिना गांधीजी को स्वतंत्रता का सपना अधूरा लगा। आपके सतत् प्रयास से 1918 के बाद स्वतंत्रता संग्राम में महिलाओं की खुली भागीदारी दिखलाई दी। 1927 में 'आल इंडिया वीमंस कांग्रेस' नामक संस्था का गठन हुआ तथा इसी वर्ष 'डॉ. मधुलक्ष्मी रेड्डी' मद्रास में पहली विधान मंडल परिषद् सदस्य बनीं।

सविनय अवज्ञा आंदोलन एवं स्वदेशी आंदोलन में विदेशी वस्तुओं को जलाना, शराब की दुकानों की तालाबंदी एवं प्रभात फेरी में सक्रिय भागीदारी करते हुए महिलाएँ जेल गईं।

महिला संगठनों के प्रयास से सातवें-आठवें दशक में अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस, अंतर्राष्ट्रीय महिला वर्ष एवं महिलाओं संबंधित सभा-गोष्ठियों का आयोजन किया गया। महिलाओं की स्थिति के आकलन हेतु भारत सरकार द्वारा 1971 में एक समिति का गठन किया गया जिसने अपनी रिपोर्ट 1974 में प्रस्तुत की। इसी कड़ी में 'कमेटी ऑन स्टेटस ऑफ वीमेन इन इंडिया 1974', नेशनल कमीशन ऑन सेल्फ इम्प्लायड वीमेन 1988, नेशनल पर्सपेक्टिव प्लान फॉर वीमेन 1988 इत्यादि अस्तित्व में आए।

### वैधानिक प्रावधान

भारतीय संविधान की निर्माण प्रक्रिया के दौरान 'महिलाओं की वैधानिक समानता' एवं 'हिंदू कोड', विचार के महत्वपूर्ण मुद्दे रहे। अतः महिला उत्थान के लिए किए गए वैधानिक प्रावधानों का विवरण निम्न हैं --

1. **बाल विवाह निषेध** : शारदा एक्ट, 1929 में संशोधन कर 1954 में लड़की-लड़के की विवाह हेतु आयु क्रमशः 18 एवं 21 वर्ष की गई। परंतु क़ानून के प्रभावी क्रियान्वयन को न देखकर 2006 में संसद में पारित 'बाल विवाह निवारण अधिनियम विधेयक



2004' में क़ानून मंत्रालय की निम्न सिफ़ारिशों को स्वीकार किया गया।

1. बाल विवाह संपन्न होते ही अवैध माना जाएगा।
2. 2 वर्ष का कठोर कारावास एवं एक लाख रुपए का जुर्माना।
3. बाल विवाह के शिकार बच्चों का सरकार द्वारा पुनर्वास आदि शामिल हैं।

परंतु अभी भी हम सफल नहीं हुए हैं। यूनीसेफ की रिपोर्ट के अनुसार 2000 से 2012 के बाल-विवाह के मामले में भारत दूसरे स्थान पर है। शीर्षदर बांग्लादेश में हैं। यहाँ तीन में से दो कन्याओं की शादी 18 वर्ष की उम्र के पहले हो जाती है। (अंतर्राष्ट्रीय क्रॉनोलोजी नवंबर 2014, पृ. 15)

## 2. महिलाओं के विरुद्ध अपराध

**अ. सती प्रथा पर रोक :** सती निवारण अधिनियम 1987 द्वारा न केवल सती हेतु दंड की व्यवस्था है वरन् सती महिमामंडन को भी अपराध की श्रेणी में रखा गया है। लेकिन आधुनिक भारत में भी सती प्रथा के मामले समाचार पत्रों में प्रकाशित होते रहते हैं। **केशरिया** तथा **कुटु बाई** के सती मामले इसी के उदाहरण हैं। (महिला सशक्तिकरण -- वीरेंद्र सिंह यादव, पृ. 305)

**आ. दहेज :** दहेज निषेध अधिनियम, 1961 में पारित एवं 1984, 1986 में संशोधित किया गया। भारतीय साक्षी अधिनियम में भी संशोधन किया गया ताकि गवाह जुटाने की परेशानी से बचा जा सके। विवाह के सात वर्ष के अंदर विवाहिता की मृत्यु को भी हत्या माना गया। परंतु इन प्रावधानों का दुरुपयोग देखते हुए सर्वोच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति चंद्रमौलि कुमार प्रसाद की अध्यक्षता वाली पीठ ने सभी राज्य सरकारों को अपने पुलिस अधिकारियों को यह निर्देश देने के लिए कहा -- भारतीय दंड संहिता की धारा 498 क के तहत मामला दर्ज होने पर स्वयं गिरफ्तारी न करें। गिरफ्तारी की आवश्यकता के बारे में स्वयं को संतुष्ट करें क्योंकि उन्हें मजिस्ट्रेट के समक्ष कारण व सामग्री पेश करनी होगी। (अंतर्राष्ट्रीय क्रॉनोलोजी, सितंबर 2014, पृ. 12) पर, दहेज का सुरसा मुँह बड़ा ही होता जा रहा है।

**इ. घरेलू हिंसा :** महिलाओं के प्रति हिंसा को रोकने के लिए भारतीय संसद के अपराधी क़ानून अधिनियम 1963 के अनुसार कोई भी घरेलू अत्याचार जो पति या उसके रिश्तेदारों द्वारा किया गया हो, क़ानूनन अपराध होगा। इसी प्रकार घरेलू हिंसा अधिनियम 2005 जो 26 अक्टूबर, 2006 से क़ानून रूप में सम्पूर्ण भारत में लागू हुआ, के अनुसार शारीरिक मारपीट ही नहीं, अपितु उत्पीड़न, यौनिक, मौखिक, भावनात्मक एवं आर्थिक पक्ष के साथ-साथ महिला को घर से निकालना

या इसकी धमकी देना घरेलू हिंसा की श्रेणी में रखा गया है। इसके तहत उसे अपने पैतृक या ससुराल के मकान के एक भाग में रहने का अधिकार भी दिया गया है।

ई. **भ्रूण-हत्या निषेध** : भारतीय दंड संहिता 1860 में 312 से 314 के द्वारा ऐसे गर्भपात को दंडनीय माना गया है जो स्त्री के जीवनरक्षक रूप में या उसकी सहमति से न किया गया हो। मैडिकल टर्मिनेशन ऑफ प्रिगनेंसी एक्ट 1971 में भी इस प्रकार की व्यवस्था है परंतु असफल होने से सरकार ने प्रसव पूर्व निदान तकनीक विनिमय दुरुपयोग निवारण अधिनियम का निर्माण किया जिसे 2002 में संशोधित किया गया। पी.सी.पी. एन.डी.टी. क़ानून 2002 के अनुसार --

क. लिंग चयन में पहली बार दोषी पाए जाने पर तीन वर्ष की सज़ा एवं पचास हजार जुर्माना।

ख. दूसरी बार दोषी पाए जाने पर पाँच वर्ष की सज़ा, एक लाख जुर्माना।

ग. सभी अल्ट्रासाउंड क्लिनिकों को अल्ट्रासाउंड मशीन का पंजीकरण एवं जाँच का प्रमाण-पत्र आवश्यक किया। साथ ही अपनी मासिक रिपोर्ट स्वास्थ्य विभाग की लाइसेंसिंग शाखा को भेजना भी अनिवार्य कर दिया।

अधिनियम का उल्लंघन करने पर मशीन जब्त करने का प्रावधान भी है। 14 फरवरी, 2003 को लागू यह क़ानून देशभर में प्रभावी है। परंतु पालना न होने पर 19 अगस्त, 2008 को उच्चतम न्यायालय के हस्तक्षेप से लिंग परीक्षण संबंधी उत्पादों और सेवाओं संबंधित विज्ञापन दिखाने वाली साइटों के विरुद्ध क़ानूनी कार्यवाही की चेतावनी के बाद गूगल और माइक्रोसॉफ्ट ने अपने ऐसे विज्ञापन हटा लिए।

परंतु कटु सत्य यह है कि अभी भी यह कार्य अधिकांश अस्पतालों में छद्म रूप से किया जाता है। यहाँ वहाँ पड़े कन्या भ्रूणों के समाचार-पत्रों में प्रकाशित समाचार किसी से छिपे नहीं हैं। पुत्र मोह गया नहीं है। एक सामाजिक संस्था का सर्वेक्षण राजस्थान में 2015 में 2100 एवं 2016 सितंबर तक 1984 महिलाएँ 5 बेटियों के बाद भी गर्भवती हैं (राजस्थान पत्रिका, 18.10.16)

उ. **बलात्कार, वेश्यावृत्ति एवं क्रय-विक्रय निषेध** : भारतीय दंड संहिता की धारा 375 के तहत बलात्कार को दंडनीय माना गया है। सह-अपराधी के रूप में महिला को दंडित न करने के साथ यह प्रावधान है कि शिकायतकर्ता भा.द.स. 1860 की धारा 45 के तहत प्रक्रिया शुरू करने की चाहे या न चाहे परंतु जिलाधिकार/शिकायत समिति को कार्यवाही करनी ही होगी। 16 दिसंबर, 2012 को घटित निर्भया कांड एवं उसके बाद दिन-प्रतिदिन बढ़ती बलात्कार की घटनाएँ इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण है कि क़ानून की पालना नहीं हो रही है। धारा 370 से 373 के तहत महिला को

दास के रूप में या वेश्यावृत्ति हेतु क्रय-विक्रय पर भी रोक लगाई गई हैं।

3. **तलाक** : पर्सनल लॉ द्वारा पति-पत्नी दोनों को तलाक लेने का पूर्ण अधिकार दिया गया है। विशेष विवाह अधिनियम 1959 के अनुसार प्रत्येक धर्म समुदाय के स्त्री-पुरुष पसंद से विवाह कर सकते हैं। इसमें विवाह एवं तलाक के समान प्रावधान हैं।
4. **मातृत्व लाभ** : अधिनियम 1961 के अनुसार माँ बनने पर बच्चे की देखभाल के लिए 24 सप्ताह के सवैतनिक अवकाश का प्रावधान है। साथ ही बालक के 18 वर्ष का होने तक आवश्यकता होने पर समय-समय पर दो वर्ष के सवैतनिक अवकाश का भी प्रावधान है। मातृत्व लाभ (संशोधन) विधेयक 2016 के द्वारा 24 सप्ताह के अवकाश में वृद्धि की गई है। अब यह अवकाश दो बच्चों के जन्म तक 26 सप्ताह का एवं इसके बाद 12 सप्ताह तक मिलेगा। (अंतर्राष्ट्रीय क्रॉनोलोजी, अक्टूबर 2016, पृ. 15)
5. **बाल सुरक्षा** : ठेका मजदूर अधिनियम 1970 के अनुसार महिला मजदूर के बच्चों की देखभाल के लिए एक बच्चा गृह भी होना चाहिए। यह प्रावधान अप्रवासी अधिनियम 1979 में भी है।
6. **समान भुगतान** : समान भुगतान अधिनियम 1973 के अनुसार एक जैसे कार्य के लिए स्त्री-पुरुष दोनों को समान वेतन दिया जाएगा।
7. **अभद्र प्रदर्शन निषेध** : महिलाओं का अभद्र प्रदर्शन (निषेध) अधिनियम 1989 के द्वारा किसी भी रूप में महिला के अभद्र प्रदर्शन पर रोक लगाई गई है।
8. **संपत्ति एवं उत्तराधिकार** : 17 जून 1956 को लागू हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम पिता की संपत्ति में पुत्री को भी पुत्र के समान अधिकार देता है। पति की संपत्ति पर भी उसके जीवन काल में पत्नी को पूर्ण अधिकार एवं पति की मृत्यु के बाद संतान के समान एक हिस्से का अधिकार देता है। समय-समय पर इसमें संशोधन कर महिलाओं के अधिकार का विस्तार किया जा रहा है। अभी कुछ दिन पूर्व हुए संशोधन के अनुसार पिता की मृत्यु पर विवाहित पुत्री को भी अनुकंपा नौकरी पाने का अधिकार दिया गया है।

अस्तु, इन सभी कानूनी प्रावधानों के अतिरिक्त भी भारत सरकार ने न जाने कितनी योजनाएँ महिलाओं के कल्याण के लिए बना रखी है जिनमें करोड़ों रुपए खर्च होते हैं। 67 करोड़ रुपए का तो अकेला राष्ट्रीय महिला कोष है जो मुसीबत में फँसी महिला की मदद करता है। संयुक्त राष्ट्र संघ से भी करोड़ों रुपए प्राप्त होते हैं परंतु जानकारी के अभाव में इनका दुरुपयोग ही होता है।

अंत में केवल इतना कि बालिका के जन्म से पूर्व ही उसके संरक्षण का प्रयास करता है भारतीय क़ानून। आज आवश्यकता इस बात की है कि जनसाधारण को इन प्रावधानों से परिचित करवाया जाए। पूर्ण दायित्वों के साथ प्रशासन द्वारा इनकी अनुपालना की जाए, सार्वजनिक स्थलों पर इनकी जानकारी लिखी हो ताकि अपराधी अपराध करने से पूर्व कई बार सोचे, न्याय प्रक्रिया सरल हो। महिलाओं को स्वयं भी अपने अधिकारों के प्रति सचेत होना होगा। साथ ही, भोग एवं वासना की विस्तार धारा को छोड़ पुरुष समाज को एक स्वस्थ विचारधारा अपनानी होगी, एक ऐसा सांस्कृतिक वातावरण विकसित करना होगा जिसमें नारी भय मुक्त होकर शील की रक्षा करते हुए, पूर्ण क्षमताओं को उजागर कर सके। यदि हम ऐसा कर पाए तो फिर महिलाओं को संरक्षण हेतु किसी आरक्षण या क़ानून की आवश्यकता नहीं रहेगी। अर्द्धनारीश्वर की कल्पना साकार हो सकेगी। अस्तु, वर्षों से खामोश पड़ी शिलाओं से ही लावा निकलता है अतः हम आशावान् हैं।

□

### महिला विधि भारती के स्वामित्व एवं अन्य जानकारी से संबंधित विवरण

#### प्रपत्र चतुर्थ (देखिए नियम 8)

|  |  |
|--|--|
| 1. प्रकाशन स्थान   | दिल्ली   |
| 2. प्रकाशन की अवधि   | त्रैमासिक  |
| 3. प्रकाशक का नाम  | सन्तोष खन्ना   |
| राष्ट्रीयता  | भारतीय   |
| पता  | बी.एच/48 (पूर्वी) शालीमार बाग, दिल्ली-88                     |
| 4. मुद्रक का नाम   | सन्तोष खन्ना   |
| राष्ट्रीयता  | भारतीय   |
| पता  | बी.एच/48 (पूर्वी) शालीमार बाग, दिल्ली-88                     |
| 5. सम्पादक का नाम  | सन्तोष खन्ना   |
| राष्ट्रीयता  | भारतीय   |
| पता  | बी.एच/48 (पूर्वी) शालीमार बाग, दिल्ली-88                     |
| 6. उन व्यक्तियों के नाम व पते जो पत्रिका के स्वामी और भागीदार हैं तथा कुल पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक शेयर-धारक हैं। | विधि भारती परिषद<br>बी.एच/48 (पूर्वी) शालीमार बाग, दिल्ली-88 |

मैं, सन्तोष खन्ना घोषित करती हूँ कि मेरी जानकारी के अनुसार उपरोक्त विवरण सही है।

हस्ता. सन्तोष खन्ना

डॉ. सूर्यबाला

## महात्मा गाँधी की प्रासंगिकता

अभी-अभी बीती सदी की सबसे मूल्यवान् आश्वस्ति और विरासत का नाम गाँधी है, जिसे सिर्फ़ भारत ही नहीं, विश्व के जनमानस ने अपनी आस्था और विश्वास सौंपा है। गाँधीवाद, गाँधी-दर्शन और गाँधी विचारधारा से भी ऊपर गाँधी एक 'भाव' की तरह हमारे अंदर स्थित हैं। इस भाव में न किसी वाद की स्थूलता है, न किसी सिद्धांत का बोझ; और न ही किसी तरह का विचारधारात्मक दबाव ही! 'गाँधी भाव' शुद्ध रूप से हमारे अनुभवों, अहसानों से सीधे जुड़ने वाला वह शब्द है, जिसे भारतीय मूल्यों के प्रति समर्पित हर आस्थावान् व्यक्ति स्वतः ग्रहण करने की आकांक्षी रहता है।

लेकिन यह एक कड़वी सच्चाई है कि इतनी समृद्ध विरासतों के साथ, देश की स्वाधीनता प्राप्त करने वाली सदी अपने उत्तरार्द्ध में, दशक-दर-दशक क्रमशः अपने अर्जित जीवन-मूल्यों को खोती चली गई और देखते-देखते समूचा समाज, विखंडनकारी तत्त्वों की गिरफ्त में आता चला गया। अर्थ के अनर्थ वाले इस विरूप समय में हमारे जीवन के आधारभूत तत्त्व और मानवीय मूल्यों का क्षरण अपने चरम पर है। विचारों की उदारता, संतुलन, सहनशीलता और नैतिकता जैसे गुण हमारे शब्दकोश से पूरी तरह बहिष्कृत हो चुके हैं। अपने सारे मानवोचित गुणों से रिक्त आज का यंत्र मानव विश्व-समाज के चिंतकों और समाजशासियों के लिए चिंता का विषय बन गया है। कारण, तेज़ी से वयस्क होती हुई नई पीढ़ी पर बाज़ारतंत्र और आक्रामकता पूरी निरंकुशता से हावी है। 'नैतिक शब्द' की 'एक्सपायरी डेट' दशकों पहले बीत चुकी है। उद्दाम भौतिक लालसाओं की पूर्ति ही जीवन का एकमात्र लक्ष्य है आज। असंतोष और लोप के दायरे असीमित हैं। जीवन में गहरे तक पैठे संस्कारों और मानवीय ऊष्मा को नकार चुकी यह पीढ़ी, मात्र 'स्व' के सुख और आत्ममुग्धता की संकरी चौहदियों से घिरी हुई है।

ऐसे समाज और समाज से गाँधी का बाहर होते चले जाना आश्चर्यजनक तो नहीं लेकिन दुर्भाग्यपूर्ण अवश्य है। इसीलिए भी, क्योंकि ये चर्चाएँ और बहसबाजियाँ जीवन को किसी सकारात्मक शिक्षा को ओर न ले जाकर, मात्र सकारात्मक मूल्यों पर टिकी होती है। इनका उद्देश्य एक आवेगी किस्म की सनसनी फैलाने एवं वैचारिक प्रतिबद्धता के नाम पर दुराग्रहों की तलवारें भाँजने से ज़्यादा कुछ नहीं होता। काश ये विघटनकारी तत्त्व समझ पाते कि भारतीय समाज की चूलें हिला देने वाली इस अपसंस्कृति से मुक्ति का रास्ता सिर्फ़ गाँधी-भाव ही दिखा सकता है। इसलिए कि सारे राजनैतिक और विचारधारात्मक कुतर्कों तथा उठा-पटक़ों से परे आज भी आमजनों के दिलों में गाँधी की छवि का सबसे सबल पक्ष उनका मानवीय पक्ष ही है। गाँधी के प्रति लोगों के मन में उपजा विश्वास और आस्था किन्हीं सिद्धांतों और नीतिपरक उपदेशों से प्रेरित न होकर उनके आचरण की शुद्धता और उनके द्वारा जिए जीवन की पारदर्शिता के कारण है। गाँधी का पूरा जीवन, विश्व-समाज के लिए पिछली सदी का सबसे विलक्षण और अभिभूत कर देने वाला अहसास था। एक तरह से मनुष्य में निहित शक्ति को विस्मित कर देने वाला प्रमाण, जिसे अतीत से भविष्य तक अकल्पनीय, अविश्वसनीय ही माना जाएगा।

सिर्फ़ सच्चाई पर टिके रहने के आग्रह, सत्य के आग्रह और अपनी संकल्पशक्ति के बूते पर एक सामान्य से दिखते हाड़ माँस के मनुष्य ने मानवीय गरिमा और क्षमता को उसके चरम बिंदु पर प्रतिष्ठित कर दिखाया। वह भी सिर्फ़ आधी सदी पहले।

यह सच है कि गाँधी की अतिरेकी मान्यताओं का अनुगमन कर पाना सामान्य मनुष्य के लिए संभव नहीं। संभव हो सकता भी नहीं। होता तो हर व्यक्ति गाँधी हो जाता। लेकिन ज़रा ध्यान दें, तो गाँधी को संतुलित, संयमित अपरिगत दृष्टि ही मूल भारतीय अवधारणा से ज़्यादा भिन्न न होकर उसी का किंचित संशोधन मात्र थी। आज सारा बखेड़ा लोभ, लालच और सारी संपदाओं को 'धुरी समान' घोषित करने वाले संतोष-धन का माहात्म्य और संपूर्ण मितव्ययिता के साथ 'परहित सरिस धरम नहीं भाई' का वैष्णवी भाव (जो किसी बंधुत्व के समभाव की देहरी पर सिर झुकाता है) ही भटकनों के बीच रास्ता तलाश करता है।

दरअसल, हमने जीवन और समाज को इतना प्रदूषित कर दिया है कि पिछले वाले अति सामान्य आचार-विचार भी अब हम पर लादे गए बोझ की तरह लगने लगे हैं। नित्यप्रति के जीवन में संपन्न की जाने वाली क्रियाओं, आचरणों को भी हमने पुरातन और दकियानूसी के खाते में डाल दिया है। अन्यथा साधन और आचरण की शुद्धता में भला किसे इनकार हो सकता है। गाँधी ने इसकी भी कोई शिक्षा नहीं दी थी। स्वयं

अपने नित्यप्रति के जीवन में ढाला था। कथनी और करनी के अंतर को अपने आचरण से मिटाया था, शायद इसलिए गाँधी-भाव, स्वेच्छा से लोगों के अंतर्मन में प्रविष्ट होता चला गया, क्योंकि उसमें एक सीधा, सच्चा मनुष्य झलकता था, बड़ी सहजता से सच को सच और झूठ को झूठ कहने का साहस रखता था। जो ग़लत के विरुद्ध निर्भयता से अड़ता था और अनुचित को अस्वीकार ही नहीं, अपने द्वारा हुई ग़लती 'स्वीकार' का साहस भी रखता था... और, सबसे बढ़कर इस मनुष्य के पास, उस पछतावे और प्रायश्चित्त का भरपूर भाव रहता था, जो मनुष्य की संवेदना को सहेजने और समाज को स्वस्थ बनाए रखने के लिए आवश्यक है। तभी तो आश्रम में अपने बेटे से हुई ग़लती का प्रायश्चित्त करने के लिए गाँधी स्वयं उपवास पर बैठे थे। अतिरेकी होने के बावजूद प्रायश्चित्त की सर्वथा अकल्पनीय अवधारणा है यह।

कुल मिलाकर, गाँधी के विरुद्ध चल रहे नकारात्मक अभियानों और कुतर्की व्याख्यानों से गाँधी का कुछ नहीं बिगड़ने वाला। वह ऐसे झोंकों से ध्वस्त होने वाले आलोक-स्तंभ नहीं...। हाँ, हम अवश्य अपने अर्जित मूल्यों की बची-खुची पूँजी खोकर पूरी तरह दिवालिया हो जाएँगे। यह क्षरण इस सदी का शायद सबसे बड़ा दुर्भाग्य है। दुर्भाग्य तो सदियों से आजमाए, जीवन को स्वस्थ, संतुलित और सत्त्व से भर पूरा करने वाले प्रयोगों को पिछड़ा और घिसा-पिटा समझने वाली नादानियों से भी जुड़ा है। अपनी संस्कारित परंपराओं के बीच से रास्ते तलाशने के बदले हम ग़्लैमर की आयातित चकाचौंध में उलझकर भटक गए। इतिहास की भूलों से सबक नहीं सीखा हमने।

गाँधी को भुलाकर, झुठलाकर या ग़लत प्रमाणित कर, अनिष्ट हम गाँधी का नहीं, अपना ही कर रहे हैं। हम इतना भी नहीं समझ पा रहे कि ऐसे प्रचारों का उद्देश्य हमारी बौद्धिक ऊर्जा के सतही स्वार्थों के अखाड़ों में तबदील करना भर है। गाँधी को वादों, दर्शनों और सिद्धांतों की अलगनियों की आवश्यकता नहीं है, वे तो निसर्ग धारा की तरह जनमानस की धमनियों में प्रवाहित हैं।

□

Dr. Bal Krishan Chawla and  
Ms. Shilpa Kwatra Chawla

---

## **Protection of Women Against Domestic Violence**

*"I Call on men and boys everywhere to join us. Violence against women and girls will not be eradicated until all of us- Men and Boys-Refuse to Tolerate it."*

*-- U.N. Secretary-General Ban Ki-Moon*

The human rights movements and constitutional movements in India guaranteed the peaceful enjoyment of the natural rights granted to women. But, lack of awareness and the lethargic attitude of the law enforcement authority made the non-availability of the rights to the women. But the strong efforts by the Government and non-government organizations may establish the good situation in the family. At the same time, the domestic violence is a family sensitive issue. While enforcing the social justice under the domestic violence, it may cause the injustice to the society. It is required to take special attention to dispose of the domestic violence cases. Because once a domestic violence case is filed, it may lead to dissolution of marriage and family system. It is true that the social change can't be expected in a fixed time, it is a gradual process and it takes time.

Women have been the victims of violence and exploitation by the male dominated society all over the world. India is no exception to this unfortunate situation. Justice, liberty, equality and dignity are the four main elements of free life stipulated in the Indian Constitution. They are the steps to the attainment of goals of welfare State and all efforts of the Government are directed towards the end in view. But, unfortunately even after 70 years of independence, Indian people continue to grope in the dark and all dreams of ensuring liberty, equality and dignity of women continue to be mere farce as they have been systematically denied to women. Family system, vulnerability, inhibitions, subordination, cultural, religious and socio-economic reasons are *inter-alia* giving scope for



violence against women.

Domestic Violence is a very pervasive serious social malady and it bluntly strips women of their most basic human rights including the right to safety in their homes. Through violence, men seek and confirm the devaluation and dehumanization of women. It is a serious human right threat to women in any society, whether rich or poor. National Commission for Women in a report estimates that at least 3% of Indian women face Domestic Violence. Reporting of such cases is extremely low. One of the major factors for this is the 'culture of silence' surrounding Domestic Violence. This ensures that information about Domestic Violence is sketchy and, as a consequence, the perpetrators often escape accountability.

Domestic Violence is a global problem affecting families of all classes and cultures. The term 'Domestic Violence' is most commonly used to describe the incidents of familial or intimate abuse. Traditionally, the family has been considered a sphere of intimacy. This idealized conception, the rhetoric of inviolability of family as an institution has shielded the Domestic violence behind the iron curtain. It happens as an unacknowledged phenomenon behind the closed doors of the family.

### **Meaning of Domestic Violence**

**Domestic Violence**, also known as **domestic abuse**, **spousal abuse**, **family violence**, and **Intimate Partner violence (IPV)**, has been broadly defined as a pattern of abusive behavior by one or both partners in an intimate relationship such as marriage, dating, family friends or cohabitation. Domestic violence, so defined, has many forms, including physical aggression ( hitting, kicking, biting, shoving, restraining, slapping, throwing objects), or threats thereof; sexual abuse; emotional abuse; controlling or domineering; intimidation; stalking; passive/ covert abuse (e.g., neglect); and economic deprivation. Alcohol consumption and mental illness can be co-morbid with abuse, and present additional challenges when present alongside patterns of abuse.

The expression "**Domestic Violence**"<sup>2</sup> used in **Section-3** means any act, omission or commission or conducts of the respondent in case :

- (a) harms or injures or endangers the health, safety, life, limb or well-being, whether mental or physical of the aggrieved person or tends to do so and includes causing physical abuse, sexual abuse, verbal or emotional abuse and economic abuse.
- (b) harasses, harms, injures or endangers the aggrieved person with a view to coerce her or any other person related to her to meet any unlawful demand for any dowry or other property or valuable security; or
- (c) has the effect of threatening the aggrieved person or any person related to her by any conduct mentioned in clause (a) or clause (b); or

(d) Otherwise injures or causes harm, whether physical or mental, to the aggrieved person.

Explanation I provide that for the purpose of the above section --

- (i) Physical abuse will mean any act or conduct which is of such a nature as to cause bodily pain, harm, or danger to life, limb or health or impair the health or development of the aggrieved person and will include assault, stridhan, property, jointly or separately owned by the aggrieved person, payment of rental related to the shared household and maintenance, criminal intimidation and criminal force;
- (ii) Sexual abuse will include any conduct of sexual nature that abuses, humiliates, degrades or otherwise violence the dignity of women;
- (iii) Verbal or emotional abuse will include (a) insults, ridicule, humiliation, name calling insults or ridicule specially with regard to not having a child or male child; and (b) repeated threats to cause physical pain to any person in whom the aggrieved person is interested.
- (iv) Economic abuse will include (a) deprivation of all or any economic or financial resources to which the aggrieved person is entitled under any law or custom whether payable under an order of Court or otherwise or which the aggrieved person requires out of necessity including, but not limited to, household necessities for the aggrieved person and her children, if any,; (b) disposal of household effects, any alienation of assets whether movable or other property in which the aggrieved person has an interest or is entitled to use by virtue of the domestic relationship or which may be reasonably required by the aggrieved person or her children or stridhan or any other property jointly or separately held by the aggrieved person.
- (c) Prohibition or restriction to continued access to resources or facilities which the aggrieved person is entitled to use or enjoy by virtue of the domestic relationship including access to the shared household.

### **Causes of Domestic Violence**

Till date, the causes of domestic violence are not known. The reason carried out in different parts of the world indicates that any social structure which treats women as fundamentally of less value than men is conducive to violence against women. Victims of violence are predominantly women while perpetrators are overwhelmingly males, which give credence to the theory that violence is an outcomes of gender inequality. According to world wide survey low self admiration, pressure to keep families together, fear of being alone, economic dependency, balancing the victim, overwhelming shame and stigma, status of women are various factors that had led to the infliction of the domestic violence.

The most common causes for women stalking and battering include

dissatisfaction with the dowry and exploiting women for more if it, arguing with the partner, refusing to have sex with him, neglecting children, going out of home without telling the partner, not cooking properly or at times indulging in extra marital affairs, not looking after in-laws etc. In some case infertility in females also leads to their assault by the family members. The greed for dowry, desire for a male child and alcoholism of the spouse are major factors of domestic violence against women in rural areas. There have been gruesome reports of young bride being burnt alive or subjected to continuous harassment for not bringing home the amount of demanded dowry. Women in India also admit to hitting or beating because of their suspicion about the husband's sexual involvement with other women. The Tandoor Murder Case of Naina Sahni in New Delhi in the year 1995 is one such dreadful incident of a woman being killed and then burnt in a Tandoor by his husband. This incidence was an outcome of suspicion of extra marital affairs of Naina Sahni which led to marital discord and domestic violence against her.

### **Constitutional and Legal Framework for Protection of Women**

**Constitutional Provisions are :** Preamble of Constitution of India provides "Equality of status and opportunity" to all citizens.

**Fundamental Rights; Article 14 : Equality before law.** The State shall not deny to any person equality before the law or the equal protection of the laws within the territory of India.

**Article 15(1) :** The state shall not discriminate against any citizen on grounds only of religion, race, caste, sex, place of birth or any of them.

**Article 15(3) :** Nothing in this article shall prevent the state from making any special provision for women and children. Article 21 Protection of life and personal liberty-Right to dignity.

**Article 23 :** Prohibition of traffic in human beings and forced labour. Indian Evidence Act, 1872 Section 113(1) presumption to a abetment of suicide by a married woman-when the question is whether the commission of suicide by a woman had been abetted by her husband or any relative of her husband and of it is shown that she committed suicide within a period of seven years of her marriage and that her husband or such relative of her husband subjected her to cruelty, the court may presume, having regard to all the other circumstances of the case, that such suicide had been abetted by her husband or by such relative of her husband.

**Indian Penal Code (IPC), 1860- Section-304-B;** Dowry death-(1) Where the death of woman is caused by any burns or bodily injury or occurs otherwise than under normal circumstances within seven years of her marriage and it is shown that soon before her death, she was subjected to cruelty or harassment by her husband or any relative of her husband

for, or in connection with, any demand for dowry, such death shall be called " dowry death", and such husband or relative shall be deemed to have caused her death.

**Section: 498A** : Husband or relative of husband of a woman subjecting her to cruelty - Whoever, being the husband or the relative of the husband of a woman, subjects such woman to cruelty shall be punished with imprisonment for a term which may extend to three years and shall also be liable to fine.

**Explanation** : For the purposes of this section, "cruelty" means-

- (a) any willful conduct which is of such a nature as is likely to drive the woman to commit suicide or to cause grave injury or danger to life, limb or health ( whether mental or physical) of the woman; or
- (b) harassment of the woman where such harassment is with a view to coercing her or any person related to her to meet any unlawful demand for any property or valuable security or is on account of failure by her or any person related to her to meet such demand.

**Domestic Violence Act, 2005** is secular in protecting women from domestic violence. A woman who is the victim of domestic violence will have the right to get the help of police, shelter homes and medical facilities. The Domestic violence Act provides monetary compensation. The law will cover those woman who are or have been in relationship where both parties have lived together in a shared household.

This Act covers those women who are or have been in a relationship at a point of time and both parties have lived together in a shared household and are related by consanguinity, marriage, or through a relationship in the nature of marriage or adoption. In addition, the relationship with the family members, living together as a joint family is also included. Even those women who are sisters, widows, mothers, single women, or living with the abuse are entitled to legal protection.

### **Conclusion & Suggestions**

Marriage involves transplantation of women from her parents family to her in-laws family. When the girl is shifted from one family to another, it is expected that great care and affection would be inflicted on her so that she does not feel like a stranger in the family. It seems that the reality is totally different. She is being beaten, harassed, tortured and in some cases, even burn to death. There is no doubt about the fact that there is any dearth of laws in this country or abroad. But the question here is do they have teeth to bite? Do we really require stringent law? Do we need to prevent violence before it starts? Are causes like patriarchal society, traditions, sex based violence, servile mentality of women, the real causal factors for demeaning position of women and do they actually serve as a backbone for violence against women? Can education and self reliance of women help them in

breaking all those old bondages and shackles in which they are presently trapped? Is equality still a dream which has till date not been realized? These and many more questions keep on cropping up in our minds and it really needs to be addressed.

There is no iota of doubt that woman is made to suffer violence by her very own people for whom she had left her parents, the place where she was born and brought up and had lived there for twenty five years. Why do people forget that she has a heart, mind and body of her own and is a human being who really feels pain when torture is inflicted on her. It is not only in India but even abroad the scenario is more or less the same.

Woman is a human being and therefore domestic violence against woman in violation of basic human rights. Human rights are those rights with which a human being human, she is born with such right. It is necessary that the system must treat her equal to men. Otherwise all those tall talks which are made in seminars, conferences, movements etc. are futile exercises.

Woman must not accept, she must challenge. She must not be awed by that which has been built up around her. She must respect that woman in her which struggles for expression. Achieving women's empowerment is not a "quick-fix". It will take sound public policies, a holistic approach and long term commitment from all development actors. Women's empowerment is both a right and "smart economics". In the ultimate analysis, empowering women is empowering society. Better women make better homes, a better society, and help us men to better our best!



## References

1. Anil Sachdeva; Indian Penal Code, 1860 Diglot Edition- 2011-12
2. Misra Preeti, ' Female Infanticide : A threat to Posterity". NISD Journal (2002) at 23-25.
3. Mahajan, Amarjit and Madhurima, Family Violence and Abuse in India, 1995.
4. J.E. O' Brien, ' Violence in Divorce-Prone families, Journal of Marriage and the Family, Vol. 33, 1971.
5. Ashraf, Nehal, Crime Against, Women, 1997.
6. Gosh, S.K. Women in a Changing Society, 1984.
7. Kanon Prakashak; 2014; The Protection of Women from Domestic Violence Act, 2005.
8. Kanon Prakashak; 2013; Constitution of India: 17,22,26 and 28.
10. P.N. Rao; 2011, Women and Violence.
11. Dushyant Yadav; Indian Bar Review vol. XLI (1) 2014.
12. Shivani Goswami; Indian Bar Review vol. XLI(4) 2014.
13. NCW Report-Violence Against Women in North India, 2005

विपिन कुमार सिंह

## कंपनी में कपट एवं कुप्रबंधन के विरुद्ध 'वर्ग कार्यवाही वाद' : एक नया उपचार

'वर्ग कार्यवाही वाद' एक विशेष उपचार है जो वादी को अपने वर्ग की ओर से कंपनी या कंपनी से संबद्ध पक्षों के विरुद्ध वाद लाने का प्रावधान करता है। 'वर्ग कार्यवाही वाद, में सभी सदस्यों को एक साथ विधिक वाद की अनुमति देता है। इसकी शुरुआत प्रतिनिधिक वाद से हुई। प्रतिनिधिक वाद से तात्पर्य एक ऐसे वाद से है जो एक या एक से अधिक व्यक्ति अपने और दूसरे के फायदे के लिए, जिसमें उसका एक हित है, संस्थित कर सकते हैं या उनके विरुद्ध संस्थित किया जा सकता है। यह नियम सुविधा के सिद्धांत पर आधारित है। ऐसे वाद के माध्यम से एक ऐसे प्रश्न पर विनिश्चय प्राप्त किया जाता है जिसमें एक बड़ा वर्ग हितबद्ध है जिसमें हर उस व्यक्ति को जिसका हित प्रभावित होता है पृथक् वाद लाने की आवश्यकता नहीं पड़ती। अर्थात् सभी को वाद में पक्षकार बनाने की आवश्यकता नहीं होती।

1980 के दशक में उच्चतम न्यायालय ने व्यक्तियों या निकायों द्वारा समाज के वंचित वर्ग हेतु याचिका दाखिल करने हेतु अनुमति देने के लिए सख्त क़ानून 'लोकस स्टैंडर्ड' के नियमों में लचीलापन लाया। वैसे वर्ग कार्यवाही मुक़दमेबाज़ी भारतीय संविधान के अनुच्छेद 32 व अनुच्छेद 226 के जनहित याचिका के लिए उच्चतम न्यायालय को दी गई विस्तृत शक्ति से उत्पन्न हुई है। हालाँकि यह शक्ति भोपाल गैस त्रासदी पीड़ितों को मदद नहीं कर पाई। क्योंकि ऐसे मुक़दमेबाज़ी करने वाले प्रक्रियात्मक नियमों के कारण 'यूनियन कार्बाइड' के खिलाफ़ वर्ग कार्यवाही मुक़दमेबाज़ी (जैसा कि अमेरिकी अर्थ में समझा गया) पूरी तरह से मुक़दमा चलाने में असमर्थ थे। न्यूयॉर्क न्यायालय में असफलता के बाद अंततः भारत संघ बनाम यूनियन कार्बाइड वाद में भारत के उच्चतम न्यायालय द्वारा दावे का निपटारा किया गया। इसी प्रकार भारत में सिविल

प्रक्रिया संहिता के आदेश 1 नियम 8 में प्रतिनिधिक वाद के बारे में उपबंध है। इस नियम के लागू होने के लिए पहली आवश्यकता है कि व्यक्तियों की संख्या अत्यधिक होनी चाहिए लेकिन इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि पक्षकारों की संख्या अनगिनत होनी चाहिए। इस नियम के अधीन एक ग्राम के निवासियों की ओर से ग्राम की संपत्ति के लिए वाद लाया जा सकेगा या एक पंथ, जाति या समुदाय की ओर से वाद लाया जा सकेगा।

### **कंपनी अधिनियम, 2013 में 'वर्ग कार्यवाही वाद' का उद्भव**

वर्ग कार्यवाही अन्याय के विरुद्ध संयुक्त रूप से उपचार हेतु आवेदन का अधिकार देता है। यह न्यायालय के खर्च को कम करने का एक शस्त्र है जिससे एक बड़ा समूह लाभ प्राप्त कर सकता है। वर्ग कार्यवाही का विचार अन्य देशों की विधि व्यवस्था में दशकों से आया हुआ है। संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रतिनिधिक वाद व्यवहार में उच्चतम न्यायालय के आदेश से प्रचलन में आया और अंततोगत्वा सिविल प्रक्रिया के फेडरल रूल के नियम 23 में संहिताबद्ध की गई। इसी प्रकार यह यूनाइटेड किंगडम के सिविल प्रक्रिया के नियम 19 में प्रतिनिधिक वाद के रूप में शामिल था। ये प्रावधान प्रक्रिया विधि के थे किंतु ये अंशधारक एवं अंशधारकों के वर्ग द्वारा प्रयोग में लाई जाती थी। भारत में दिसंबर 2004 में ईरानी समिति ने एक नई कंपनी विधि व्यवस्था करने की सलाह दी जिसमें कंपनी अधिनियम, 1956 की धारा 397, 398 में वर्ग कार्यवाही के प्रावधान लाने का प्रस्ताव दिया तथापि भारत में यह सुविधा तकनीक कंपनी अधिनियम, 2013 के आने तक उपलब्ध नहीं थी। वर्ग कार्यवाही का यह विशेष प्रावधान 2009 के सत्यम वाद के बाद भारत में आया। सत्यम मामले में भारतीय निवेशकों ने लगभग 5000 करोड़ रुपए तथा अमेरिकी निवेशकों ने लगभग 700 करोड़ रुपए सत्यम कंप्यूटर्स कंपनी में निवेश किया था। भारतीय कंपनी विधि में एक साथ 'वर्ग कार्यवाही' की व्यवस्था न होने के कारण तथा अलग अलग कमजोर/सस्ता वकील करने के कारण उनका वाद उच्चतम न्यायालय में खारिज कर दिया गया जबकि अमेरिका की विधि में 'वर्ग कार्यवाही' की व्यवस्था होने के कारण सभी अमेरिकी निवेशकों ने मिलकर वर्ग कार्यवाही की, अपने 700 करोड़ रुपए वसूल करने में सफल रहे तथा वे भारतीय निवेशक अपने हानि की पूर्ति कराने के योग्य नहीं थे इसका परिणाम यह हुआ कि निवेशकों के हित को देखते हुए कारपोरेट तंत्र को यह महसूस हुआ तथा लंबे अंतराल के बाद वर्ग कार्यवाही का कंपनी अधिनियम में प्रावधान किया गया। कंपनी अधिनियम, 2013 के अंतर्गत वर्ग कार्यवाही की संकल्पना को अधिनियम के अध्याय 16 में 'अन्यायपूर्ण आचरण और कुप्रबंध का निवारण' के अंतर्गत धारा 245 में 'वर्ग कार्यवाही' के रूप में स्थान दिया गया जिसमें सभी छोटे बड़े प्रावधानों को सभी अंशधारियों एवं हितधारियों के हितों को शामिल

किया गया है। इसके अतिरिक्त, कंपनी अधिनियम, 2013 अनुमति देता है कि कोई भी व्यक्ति, व्यक्तियों का वर्ग या संघ किसी चूक से पीड़ित व्यक्ति के अधिकार के लिए धारा 245 के अंतर्गत वाद दायर कर सकता है।<sup>1</sup>

**वर्ग कार्यवाही का आवेदन कौन एवं किन परिस्थितियों में कर सकता है?**

इस उपचार के अंतर्गत ऐसे अंशधारकों एवं जमाकर्ताओं के वर्ग आवेदन कर सकते हैं जिसमें यदि उनके विचार से कंपनी द्वारा ऐसा कारोबार किया जा रहा है जो कंपनी के हित या कंपनी के सदस्यों के हित या कंपनी के जमाकर्ताओं के हित के विरुद्ध है, जो निम्नलिखित सभी अथवा किन्हीं एक रूपों में है :--

1. ऐसे कार्य जो कंपनी के संगम ज्ञापन अथवा संगम अनुच्छेद के अधिकारातीत है, को रोकने हेतु; या
2. ऐसे कार्य जो कंपनी के संगम ज्ञापन या संगम अनुच्छेद में दिये गए प्रावधानों को भंग कर रहा है, को रोकने हेतु; या
3. ऐसे संकल्प जो कि सदस्यों अथवा जमाकर्ताओं पर दबाव या मिथ्याकथन द्वारा पारित किया गया हो, को शून्य घोषित करने हेतु; या
4. उपरोक्त संकल्प के कार्य को कंपनी और उसके निदेशकों द्वारा किया जाना, को रोकने हेतु; या
5. कंपनी के ऐसे कार्य जो कंपनी अधिनियम या किसी अन्य अधिनियम के विपरीत हो, को रोकने हेतु; या
6. कंपनी द्वारा ऐसा कार्य किया जाना जो सदस्यों द्वारा पारित संकल्प के विपरीत हो, को रोकने हेतु आदि।

**(क) सदस्यों द्वारा आवेदन :** कंपनी अधिनियम, 2013 की धारा 245 (3)(i) में आवेदन हेतु आवश्यक धारा 244 के अंतर्गत आवेदन हेतु शर्त के समान है। अंश पूँजी वाली कंपनी की दशा में सदस्यों की संख्या कम-से-कम 100 होनी चाहिए।

बिना अंश पूँजी वाली कंपनी की दशा में ऐसे सदस्य जो कम से कम कुल सदस्यों का 1/5 से कम न हो, आवेदन कर सकते हैं। इन सदस्यों के आवेदन पत्र पर हस्ताक्षर होना आवश्यक है।

**वर्ग कार्यवाही का आवेदन किसके विरुद्ध किया जा सकता है?**

1. कंपनी के विरुद्ध
2. कंपनी के निदेशकों के विरुद्ध<sup>2</sup>
3. लेखा फर्म सहित लेखा परीक्षकों के विरुद्ध<sup>3</sup>
4. विशेषज्ञ या विधिक सलाहकार या परामर्शदाता (तृतीय पक्ष) के विरुद्ध<sup>4</sup>



इस प्रकार जहाँ कोई कपटपूर्ण या दोषपूर्ण या अविधिपूर्ण कार्य किया जाता है जिससे कंपनी या उसके अंशधारकों या जमाकर्ताओं को क्षति पहुँचती है तो अंशधारकों या जमाकर्ताओं द्वारा उपरोक्त पक्षों के विरुद्ध वर्ग कार्यवाही के अंतर्गत वाद दायर कर क्षतिपूर्ति की जा सकती है।

### **वर्ग कार्यवाही से संबंधित अधिकरण की शक्तियाँ**

कंपनी अधिनियम, 2013 की धारा 245 के अंतर्गत अधिकरण का आदेश केवल वर्ग कार्यवाही वाद दायर करने वाले सदस्यों या जमाकर्ताओं तक सीमित नहीं है अपितु यह उस कंपनी, उस कंपनी के सभी सदस्यों, सभी जमाकर्ताओं और लेखा फर्म सहित लेखाकारों, विशेषज्ञों, सलाहकारों अथवा किसी अन्य संबंधित व्यक्तियों पर भी बाध्यकारी होगा।<sup>5</sup> अधिकरण वर्ग कार्यवाही के अंतर्गत आवेदन हेतु शर्त लगा सकती है कि सदस्य या जमाकर्ता आदेश प्राप्त करने हेतु सद्भावपूर्ण आवेदनकर्ता के रूप में हों तथा यदि कोई तृतीय पक्षकार के प्रति वाद लाया गया हो तो उस हेतु साक्ष्य की माँग भी कर सकती है।<sup>6</sup> अधिकरण ऐसे सबूत की माँग कर सकती है कि कहीं सदस्य या जमाकर्ता का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष हित तो नहीं है। जहाँ कोई कार्य या चूक हो चुकी है या किसी परिस्थिति में होने की संभावना है तो कंपनी द्वारा पुष्टि की माँग कर सकती है। कंपनी अधिनियम, 2013 की धारा 245 के अंतर्गत अधिकरण को ऐसे आदेश पास करने हेतु समर्थ बनाया गया है जिसमें सदस्यों एवं जमाकर्ताओं के एक समान आवेदनों का एक साथ समेकन किया जा सके। अधिकरण को यह भी शक्ति है कि वह एक समान आवेदनों को चाहे वह किसी भी क्षेत्राधिकार में लंबित हो, समेकित कर सकती है।<sup>7</sup> एक ही वाद हेतुक के लिए दो वर्ग कार्यवाही वाद दायर नहीं किया जाएगा।<sup>8</sup>

अधिकरण के आदेशों का पालन न करने की स्थिति में वह कंपनी ऐसे जुर्माने से दंडित की जाएगी जो 5 लाख रुपए से कम न हो तथा जो 25 लाख रुपए तक हो सकेगा और प्रत्येक ऐसा अधिकारी जो ऐसा दोषी होगा वह ऐसे कारावास से जो 3 वर्ष तक हो सकेगा तथा ऐसे जुर्माने से जो 25000 रुपए से कम न होगा किंतु जो 1 लाख रुपए तक हो सकेगा, दंडित किया जाएगा।<sup>9</sup> जहाँ अधिकरण के समक्ष यह पाया जाता है कि किया गया आवेदन तुच्छ या परेशान किए जाने के आशय से किया गया है तो ऐसे आवेदन को रद्द कर दिया जाएगा और विपक्षी से वाद खर्च के रूप में ऐसा मूल्य वसूला जाएगा जो एक लाख रुपए से अधिक न हो।<sup>10</sup>

### **वर्ग कार्यवाही वाद से लाभ**

1. वर्ग कार्यवाही वाद में बड़ी संख्या में व्यक्तिगत दावों का एकत्रीकरण होता है।

2. वादों का एकत्रीकरण क़ानूनी प्रक्रिया की दक्षता बढ़ा सकता है एवं मुक़दमे की लागत को कम कर सकता है। क़ानून और तथ्य के सामान्य प्रश्नों के मामलों में वर्ग कार्यवाही दावे में एकत्रीकरण से उन्हीं गवाहों और साक्ष्यों को दोहराने की आवश्यकता से बचा जा सकता है।<sup>11</sup>
3. एक वर्ग कार्यवाही उस समस्या को दूर कर सकती है जो किसी भी व्यक्ति को छोटी-सी वसूली के लिए अपने अधिकारों हेतु मुक़दमा चलाने हेतु प्रोत्साहित नहीं करती है।<sup>12</sup> एम्चेम प्रोडक्शंस बनाम विंडसर के वाद में यह कहा गया कि वर्ग कार्यवाही इस समस्या को किसी अन्य व्यक्ति (सामान्यतया एक अटार्नी) को किए गए श्रम के मूल्य में अपेक्षाकृत कम संभावित वसूली को एकत्रित करके हल करता है।
4. वर्ग कार्यवाही वाद एक वर्ग के व्यवहार को बदलने के लिए लाया जा सकता है, जिसमें प्रतिवादी एक सदस्य है। लैंडर्स बनाम फ्लूड (1976) के वाद में कैलिफ़ोर्निया उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्णित एक महत्वपूर्ण मामला था जिसका उद्देश्य डॉक्टरों के व्यवहार को बदलना था जिसमें उन्हें संदिग्ध चोटों एवं बाल शोषण में होने वाले नुक़सान के लिए नागरिक कार्रवाई के ख़तरे का सामना करना पड़ता था।
5. वर्ग कार्यवाही वाद उस स्थिति से बचाती है जहाँ प्रतिवादियों के पालन के लिए अलग-अलग न्यायालयों के फैसले असंगत मानक बनाते हैं। उदाहरण के लिए जहाँ कई व्यक्तिगत बांड धारक यह तय करने के लिए मुक़दमा करते हैं कि क्या वे अपने बांड को सामान्य स्टॉक में परिवर्तित कर सकते हैं मामले में अलग-अलग परिणाम हो सकता है।

**निष्कर्ष :** सत्यम मामले के पश्चात् अन्यायपूर्ण आचरण एवं कुप्रबंध के निवारण हेतु 'वर्ग कार्यवाही वाद' नामक नवीन उपचार भारतीय कंपनी विधि में अस्तित्व में आया जिसकी लंबी अवधि से आवश्यकता महसूस की जा रही थी। वर्ग कार्यवाही का सबसे बड़ा लाभ यह है कि यह वाद मूल्य को कम करता है तथा इसी के साथ एक ही वाद के लिए अलग-अलग तथा बार-बार गवाही से मुक्ति मिलती है।

□

#### संदर्भ

1. धारा 245 (10), कंपनी अधिनियम, 2013
2. जेंकिंस बनाम रेमार्क इंडस्ट्रीज 782-एफ. 2-डी 468, 473(1986)
3. एम्चेम प्रोडक्शंस बनाम विंडसर, 521 यू.एस. 591, 617(1997)

## सुशांत सुप्रिय

### गुड-बाय

ईशान बहुत देर तक फीके, धुँधले आसमान को देखता रहा। हरियाली-विहीन अपने भूरे लॉन को देखता रहा। क्या वह इन्हें अंतिम बार देख रहा था? अपने व्यक्तिगत भूमिगत परमाणु शरण-स्थल या न्यूक्लियर-शेल्टर में जाने से पहले वह धरती और आकाश की छवियों को अपनी आँखों में भर लेना चाहता था। आम लोगों को तो भीड़-भाड़ वाले सरकारी न्यूक्लियर-शेल्टर से गुज़ारा करना पड़ेगा, पर भला हो उसके पिता का जो एक नामी परमाणु-वैज्ञानिक थे। उन्होंने अपने जीवन-काल में अपनी बुद्धिमत्ता और मेहनत से अपने घर के नीचे ही यह व्यक्तिगत परमाणु शरण-स्थल बना लिया था, जिसका फ़ायदा अब ईशान को होने वाला था। बाहर कभी भी पूर्वी और पश्चिमी गोलार्द्ध के देशों के बीच परमाणु-युद्ध छिड़ सकता था। यह सन् 2218 का साल था। भयावह प्रदूषण की वजह से पृथ्वी अब इंसानों के रहने लायक नहीं रह गई थी। 'हब्ल' से भी हज़ार गुना अधिक शक्तिशाली टेलिस्कोपों की मदद से इंसान ने अब सुदूर अंतरिक्ष में पृथ्वी जैसे ग्रह ढूँढ़ लिए थे, जहाँ जाकर बसा जा सकता था। जो लोग जा सकते थे, वे अन्य ग्रहों पर बसी मानव-कॉलोनियों पर नया जीवन शुरू करने के लिए भेजे गए अंतरिक्ष-यानों में बैठ कर निकल गए थे। उसकी प्रेयसी नेहा भी उन में से एक थी।

‘ईशान, तुम भी चलो न साथ। पृथ्वी का भविष्य अब धूमिल है। चलो न, हम सितारों में नई दुनिया बसाएँगे।’ जाने से पहले नेहा ने उसका मन बदलने का बहुत प्रयास किया था। पर वह नहीं माना था। अपनी पृथ्वी से उसे बहुत लगाव था। इसे छोड़ कर वह कहीं और जाकर बसने की कल्पना भी नहीं कर सकता था। वह पृथ्वी को बचाने के लिए बनाई गई मुख्य समिति का एक महत्वपूर्ण वैज्ञानिक था। इन वैज्ञानिकों की सिफ़ारिशों पर दोनों गोलार्द्ध की सरकारों को अमल करना था।

‘नेहा, तुम भी क्यों नहीं यहीं रुक जाती हो ? हम लोग पृथ्वी को बचाने की एक

अंतिम भरपूर कोशिश कर रहे हैं।' उसने कहा था, हालाँकि अपनी कही बात पर उसे खुद ही पूरा यकीन नहीं था। नेहा नहीं रुकी थी। इस बात को दो साल हो गए थे।

हमारी धरती को इतना बंजर और प्रदूषित बनाने के लिए कौन ज़िम्मेदार है -- वह फिर से सोचने लगा। पिछले दो सौ सालों के सभी घटना-क्रमों के बारे में उसने पढ़ा था। पृथ्वी पर प्रदूषण लगातार बढ़ता चला गया था। जल-प्रदूषण, वायु-प्रदूषण, ध्वनि-प्रदूषण। चौबीसों घंटे प्रदूषण से बचने वाला मॉस्क लगाए बिना अब लोग धरती पर साँस भी नहीं ले सकते थे। अक्सर भरी दुपहरी में 'स्मॉग' का अँधेरा छाया रहता। धरती लगातार बंजर होती जा रही थी। पेड़-पौधे खत्म होते जा रहे थे। पशु-पक्षी विलुप्त होते जा रहे थे। हरियाली कुछ गिने-चुने इलाकों में ही बची रह गई थी। हम इंसानों ने अपनी धरती को क्या से क्या बना दिया --

उसने सोचा।

थोड़ी ही देर में वह अपने न्यूक्लियर-शेल्टर में जाकर उसके धातु के मजबूत द्वार को पूरी तरह सील करके बंद कर देने वाला था। बाहरी दुनिया से तब उसका संपर्क लगभग पूरी तरह खत्म हो जाने वाला था न जाने कितने महीनों, बरसों तक के लिए। उसने अपने 'न्यूक्लियर शेल्टर' में 'ऐंटी-न्यूक्लियर अटैक पिल्स' का भंडार सहेज कर रख लिया था। इन गोलियों को खाने से परमाणु बम से होने वाले विकिरण से बचा जा सकता था। खाने-पीने के सामान की समुचित व्यवस्था कर ली गई थी। इसके अलावा विशेष किस्म के कैप्सूल खाने से भूख लगने पर पेट भर जाता था। इस दवाई का भंडार भी वहाँ सहेज लिया गया था। लगभग दस बरस तक वह बिना बाहर आए आराम से अपने न्यूक्लियर-शेल्टर में सुरक्षित जीवन बिता सकता था।

लेकिन आज धरती पर हालात ऐसे क्यों हो गए -- उसने सोचा। डेढ़-दो सौ साल पहले तक दुनिया बहुत सारे देशों में बँटी थी। पर बाहरी दुनिया के 'एल्यंस' से आए खतरे ने दुनिया के देशों को एकजुट करने का काम किया। सन् 2048 में दूसरी आकाश गंगा से आए भयावह 'एल्यंस' के एक समूह से निपटने के लिए इंसानों को आपस में मिल-जुल कर उनसे युद्ध करना पड़ा, जो कई बरसों तक चला। अंत में पृथ्वीवासी विजयी हुए। तब तक दुनिया दो गोलाद्ध में बँट चुकी थी -- पूर्वी और पश्चिमी गोलाद्ध। किंतु अफसोस कि 'एल्यंस' का खतरा खत्म होते ही दोनों गोलाद्ध वर्चस्व के लिए आपस में लड़ने-झगड़ने लगे। अब स्थिति इतनी खराब हो गई थी कि किसी भी समय दोनों गोलाद्ध की सरकारें एक-दूसरे पर परमाणु-हमला कर सकती थीं, जिससे धरती का विनाश निश्चित था।

तभी ईशान का मोबाइल फोन परिचित अंदाज़ में बज उठा। दूसरी ओर से आ रही

आवाज़ सुनकर वह हैरान रह गया। यह तो नेहा की आवाज़ थी। पर यह कैसे संभव था? वह तो दो साल पहले ही किसी और ग्रह पर जा चुकी थी।

‘...ईशान, मेरी आवाज़ सुनकर हैरान मत हो। मैं तुम्हें मनाकर अपने साथ ले जाने की एक और कोशिश करने के लिए आ रही हूँ। बस कुछ ही देर में तुम्हारे पास पहुँच रही हूँ। पता है, हमने ऐंड्रोमीडा गैलेक्सी में कांस्टेलेशन ‘कैप्रियन’ के ग्रह ‘410 गामा कैप्रियनिस’ पर सफलतापूर्वक मानव-बस्ती बसा ली है। यह ग्रह पृथ्वी जैसा है। यहाँ प्रचुर मात्रा में पानी और ऑक्सीजन उपलब्ध है...।’ फोन पर दूसरी ओर से आती नेहा की आवाज़ सुनकर ईशान को लग रहा था जैसे उसके कानों में शहद की मिठास घुल रही हो।

जल्दी ही सामने वाले बड़े मैदान में एक अंतरिक्ष-यान उतरा। ईशान के देखते-ही-देखते नेहा उसके पास आ पहुँची।

‘चलो ईशान, मैं तुम्हें लेने आई हूँ।’ नेहा ने ईशान को आलिंगन में लेते हुए कहा। कितने सही समय पर आई है नेहा -- ईशान ने सोचा। सिर पर मँडराते परमाणु-युद्ध की विभीषिका से चिंतित ईशान ने अब अपना इरादा बदल लिया था। इस तृतीय विश्व-युद्ध में धरती का विनाश निश्चित था।

आने वाले एक-दो दिनों में दोनों ने धरती पर उपलब्ध कई उपयोगी वनस्पतियों और जीव-जंतुओं को अंतरिक्ष-यान में भर लिया। नए ग्रह पर जाने में पंद्रह दिन का समय लगता था। वह भी तब, जब उनका अंतरिक्ष-यान प्रकाश की गति से यात्रा करता था। पृथ्वी पर पीछे छूट जाने वाले मित्रों से अंतिम मेल-मुलाकात कर ली गई थी। जो साथ आना चाहते थे, उन्हें साथ ले लिया गया था।

आखिर दो दिन बाद सूर्योदय के समय ईशान ने नेहा के साथ अंतरिक्ष-यान में सुदूर ग्रह के लिए उड़ान भरी। पीछे छूट रही नीली, भूरी और थोड़ी हरी पृथ्वी अंतरिक्ष से अब भी सुंदर लग रही थी -- उसने सोचा। ‘आइ विल मिस यू, अर्थ !’ उसने कहा। उसकी आँखों में आँसू आ गए। नेहा के अंक में मुँह छिपाते हुए उसने रूँधे गले से कहा, ‘बेस्ट ऑफ लक, मेरी प्यारी धरती। गुड-बाय!’

□

डॉ. प्रतिभा चौधरी

## विधि शिक्षा व्यवस्था में हिंदी भाषा का प्रयोग

संविधान का अनुच्छेद 343 यह उपबंधित करता है कि संघ की राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी होगी। प्राचीन भारत के मनीषी इस तथ्य से भली-भाँति अवगत थे कि शिक्षा, व्यक्ति के सर्वांगीण विकास, समाज की चतुर्मुखी उन्नति और सभ्यता की आधारशिला है अतः उन्होंने शिक्षा की ऐसी प्रशंसनीय प्रणाली का प्रतिपादन किया, जिसने न केवल विशाल वैदिक साहित्य को सुरक्षित रखा वरन् ज्ञान के विविध क्षेत्रों में मौलिक विचारों को भी जन्म दिया जिनसे भारत आज भी गर्व और गौरव से उन्नत है।

भारत में प्राचीन काल में विधि की शिक्षा प्राप्त करने के लिए कोई हिंदी किताबें उपलब्ध नहीं थी परंतु विकास के पथ पर बढ़ते हुए बहुत सारी किताबें तथा अधिनियम एवं पत्रिकाएँ अब हमें हिंदी में प्राप्त होने लगे हैं। भारत की 70 प्रतिशत जनसंख्या गाँवों में निवास करती है और जिन गाँवों में हिंदी को मातृभाषा के रूप में अपनाया है उन गाँवों के बच्चों को उच्च शिक्षा अंग्रेज़ी माध्यम में होने के कारण काफ़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। आज विधि शिक्षा प्राप्त करने में ग्रामीण विद्यार्थियों को कोई कठिनाई नहीं होती क्योंकि विधि शिक्षा के लिए अब पर्याप्त सामग्री हिंदी में उपलब्ध है। मेरी दृष्टि में हमें अपनी भाषा में ही काम करना चाहिए तथा मौलिक विचारों को व्यक्ति अपनी भाषा में ही व्यक्त कर सकता है तथा विद्यार्थियों को भी अपना विषय समझकर उसे परीक्षा में प्रस्तुत करने में आसानी रहती है।

इसी संदर्भ में लार्ड मैकाले ब्रिटिश गवर्नर जनरल ने कहा था “भारतवासियों को तन से भारतीय रहने दो, मन से अंग्रेज़ बना दो”। मुझे आज यह कथन साकार होते दिखाई दे रहा है। वर्तमान समय में अंग्रेज़ी का ही बोलबाला है। विधि शिक्षा में 5 वर्षीय पाठ्यक्रम में अधिकांश बच्चे अंग्रेज़ी माध्यम के होते हैं और अंग्रेज़ी में विधि शिक्षा प्राप्त करने के बाद उनके भविष्य में प्लेसमेंट को लेकर कोई रुकावट नहीं होती है मेरी नज़र

में हम आज अपनी संस्कृति, सभ्यता तथा भाषा को छोड़कर पाश्चात्य संस्कृति का पीछा कर रहे हैं।

संविधान के अनुच्छेद 343 में हिंदी को राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठित हुए एक लंबा समय होने को आया है लेकिन आज भी वह एक प्राणविहीन मूर्ति के रूप में संविधान के पन्नों की शोभा मात्र बढ़ा रही है। कहने को तो हिंदी को भारत ही राजभाषा कहा जाता है लेकिन वह अब तक अपना यथोचित स्थान नहीं बना पाई है।

इसी संदर्भ में राजभाषा अधिनियम 1963 में पारित किया गया। वस्तुतः यह अधिनियम संवैधानिक प्रावधानों को कार्य रूप में परिणित करने के लिए बनाया गया है। इसकी धारा 3 के अनुसार संविधान के प्रवर्तन में आने के 15 वर्ष बाद भी अंग्रेज़ी का प्रयोग यथावत् होता रहेगा। साथ ही यह व्यवस्था भी की गई कि संघ और राज्य के बीच पत्र व्यवहार की भाषा अंग्रेज़ी रहेगी जब तक वह राज्य हिंदी को राजभाषा के रूप में अंगीकृत नहीं कर लेते तथा धारा 7 में भी न्यायालयों की भाषा के बारे में वे ही प्रावधान किए हैं जो संविधान में मिलते हैं।

उच्चतम न्यायालय ने आर.आर. दलवाई बनाम स्टेट ऑफ तमिलनाडू (Air 1976 S.C. 1559) के मामले में हिंदी प्रयोग को अवश्य प्रोत्साहित किया है हुआ यह है कि तमिलनाडू सरकार ने हिंदी विरोधी आंदोलनकारियों के लिए एक पेंशन योजना बनाई और इस पेंशन योजना को उच्चतम न्यायालय में चुनौती दी गई। उच्चतम न्यायालय ने इसे असंवैधानिक करार देते हुए कहा कि यदि कोई राज्य हिंदी या किसी अन्य भाषा के विरुद्ध मनोभाव को उत्तेजित करने में लगता है तो ऐसी मनोवृत्तियों को आरंभ में ही नष्ट करना उचित है क्योंकि ये राष्ट्र विरोधी प्रवृत्तियाँ हैं। चूँकि हिंदी भाषा का विरोध करने वालों को प्रोत्साहन देने में हिंदी के प्रसार की वृद्धि में गतिरोध उत्पन्न होता है अतः ऐसी पेंशन योजना अवैध एवं असंवैधानिक है।

इंग्लिश मीडियम स्टूडेंट्स एसोसिएशन बनाम स्टेट ऑफ कर्नाटक (AIR 1994 S.C. 1702) के मामले में संविधान के अनुच्छेद 350-क की व्याख्या करते हुए यह कहा गया है कि “प्रत्येक राज्य और राज्य के भीतर प्रत्येक स्थानीय प्राधिकारी भाषायी अल्पसंख्यक वर्गों के बालकों को शिक्षा की पर्याप्त सुविधाएँ उपलब्ध कराने का प्रयास करेगा।”

यूनियन ऑफ इंडिया बनाम मूरासोली मारन (AIR 1997 S.C. 225) के मामले में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि “हिंदी में शिक्षा देने का आबद्धकर आदेश संविधान के किसी भी अनुच्छेद का उल्लंघन नहीं करता अपितु यह संविधान के अनुच्छेद 343 एवं 344 की भावना को मूर्त रूप प्रदान करता है।

डॉ. अमरेश कुमार बनाम लक्ष्मीबाई नेशनल कॉलेज ऑफ फिज़िकल एजुकेशन

**ग्वालियर (AIR 1997 M.P. 43)** के मामले में तथ्य इस प्रकार थे कि ग्वालियर में शारीरिक शिक्षा देने वाला एक केंद्रीय संस्थान है। इस संस्थान में अंग्रेज़ी में शिक्षा दी जाती है। डॉ. अमरेश कुमार ने मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय में जनहित याचिका दायर कर संस्थान में प्रशिक्षण का माध्यम अंग्रेज़ी के साथ-साथ हिंदी भी रखे जाने की मांग की। उन्होंने यह कहा कि विद्यार्थियों को अपनी परीक्षा का माध्यम हिंदी रखने की छूट दी जानी चाहिए तथा उन्होंने केंद्रीय सरकार के परिपत्रों का हवाला भी दिया। अंततः उच्च न्यायालय ने अंग्रेज़ी के साथ-साथ हिंदी माध्यम रखे जाने के निर्देश दिए।

मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने कहा “भारत को स्वतंत्र हुए 50 वर्ष पूरे हो गए हैं लेकिन हमारी मानसिक दासता अभी भी यथावत् हैं। संविधान के अनुच्छेद 343 में हिंदी को हमारी राजभाषा घोषित किया गया है लेकिन अंग्रेज़ी के बल पर उच्च पदों पर आसीन होने की आकांक्षा रखने वाले मुट्ठी भर लोग इसे यथोचित स्थान दिलाने में कंटक बने हुए हैं। भारत में अंग्रेज़ी जानने वाले लोगों का प्रतिशत नगण्य है फिर भी अंग्रेज़ी के बल पर वे अपने आपको अन्य लोगों से ऊपर मानते हैं। सुस्थापित सिद्धांत है कि बालक अपने विचारों की अभिव्यक्ति अपनी मातृभाषा में अधिक अच्छी तरह से कर सकता है। ऐसे बालकों पर अंग्रेज़ी थोपना उनके मानसिक एवं बौद्धिक विकास को अवरुद्ध करना है”।

मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय का यह निर्णय हिंदी को राजभाषा के रूप में अपना यथोचित स्थान प्रदान करने की दिशा में समय के दस्तावेज़ पर ऐसा सशक्त हस्ताक्षर है जो आने वाले समय में “एक हृदय हो भारत जननी” की कल्पना को साकार करेंगे।

किसी देश की भाषा और उसका साहित्य उस देश की सभ्यता और संस्कृति का दर्पण होता है। भाषा और साहित्य से ही देश की समृद्धि का आंकलन किया जा सकता है। भाषा ही मानव मैत्री एवं बंधुत्व का संचार करने का एक उत्तम माध्यम है। हिंदी भाषा को सूर, तुलसी, मीरा और महादेवी जैसे साहित्य विद्वानों ने ज़मीन से आसमानी ऊँचाईयों तक पहुँचाया है। विवेकानंद एवं अटल बिहारी वाजपेयी जैसे नेताओं ने देश की सीमा पार संयुक्त राष्ट्र तक पहुँचाया है, तो वर्तमान में माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने हिंदी को यू.एन.ओ. में गुंजायमान कर भारतीय संस्कृति और गरिमा को चार चाँद लगा दिए हैं। भारत की विदेश मंत्री माननीय सुषमा स्वराज के ए.एन.ओ. में हिंदी भाषणों की भूरि-भूरि प्रशंसा हुई थी, उससे भी अंतर्राष्ट्रीय धरातल पर हिंदी के कद में कई गुणा वृद्धि हुई है। राजभाषा हिंदी में गंगा जैसी भारतीय संस्कृति की संवाहक गति और शक्ति है यही कारण है कि भारतीय संविधान में हिंदी को राजभाषा के रूप में अंगीकृत किया गया है।

विधि शिक्षा प्राप्त करने और प्रदान करने के लिए हिंदी में पर्याप्त विषय सामग्री उपलब्ध हैं जिसके माध्यम से हमारे देश की ग्रामीण जनता के जो विद्यार्थी विधि विषय



को चुनकर अपना भविष्य सुनहरा बना सकते हैं तथा जनता को न्याय दिलाने में सहयोग प्रदान कर सकते हैं।

आज इस बात की ज़रूरत है कि देश के उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय में भी हिंदी को प्रवेश दिया जाए। इसके लिए भारत की संसद को उचित क़ानून बनाना होगा। जब तक ऐसा नहीं होता, देश की जनता को सही अर्थों में न्याय नहीं मिल सकता। न्याय की अवधारणा को यथार्थ के धरातल पर उतारने के लिए संसद को आगे आना होगा।

□

### संदर्भ

1. डॉ. जय नारायण पांडे, भारत का संविधान
2. डॉ. बसंती लाल बॉवेल, भारत का संविधान
3. डॉ. एन.आर. लबाना, विधि शिक्षा एवं योजनाएँ
4. R.D. Agrawal, Law of Education and Educational Institute

---

### कविता

डॉ. उषा देव

---

## पाठ क्यों याद नहीं

घुट्टी पिलाते रहे माँ-बाप  
सच कहना, न धोखा देना  
बाहर की लगी ऐसी हवा  
पाठ तुम्हें न याद रहा  
तन-मन के सुख लम्हों को  
दे बैठे तुम इतना तूल  
वे तो बनाना चाहते थे हंस  
तुम बन गए बगुले फ़िज़ूल

भूल गए तुम मात-पिता को  
सच तुम्हें वे याद नहीं  
देर-सवेर से ही लौटो  
पर लौट आओ तुम जरूर  
व्यर्थ गँवाओं न यह जीवन  
नहीं मिलेगा बारंबार  
उफ़! तुम्हें पाठ क्यों नहीं याद?

□

रेनू नूर

## राष्ट्रभाषा उत्सव एवं राष्ट्रभाषा गौरव सम्मान 2017 : एक रिपोर्ट

संसदीय हिंदी परिषद्, विधि भारती परिषद् एवं परिचय साहित्य परिषद् के अथक प्रयास से इस वर्ष 10 नवंबर, 2017 को सायं 3.30 बजे संसद के केंद्रीय कक्ष में राष्ट्रभाषा उत्सव का आयोजन बहुत ही सुचारु रूप से संपन्न किया गया। इस कार्यक्रम में सैकड़ों की संख्या में श्रोतागण उपस्थित रहे जिन्होंने इस कार्यक्रम द्वारा अपनी ज्ञानवृद्धि की। इस राष्ट्रभाषा उत्सव में न केवल विभिन्न प्रसिद्ध साहित्यकार एवं मीडिया कर्मी तथा कर्मठ हिंदी सेवियों को राष्ट्रभाषा गौरव सम्मान से सम्मानित किया गया अपितु 'संसद में हिंदी : कल, आज और कल' विषय पर चिंतन-मनन भी किया गया।

इस कार्यक्रम का उद्घाटन श्री थावर चंद गहलोत, केंद्रीय कल्याण न्याय और अधिकारिता मंत्री, भारत सरकार के कर-कमलों द्वारा किया जाना था परंतु किन्हीं विशेष कारणों के चलते वे उपस्थित न हो सके। इस कार्यक्रम में मुख्य अतिथि स्वरूप डॉ. मुरली मनोहर जोशी, पूर्व केंद्रीय मंत्री, संसद सदस्य, लोक सभा, डॉ. सत्यनारायण जटिया, पूर्व केंद्रीय मंत्री संसद सदस्य, राज्य सभा; पद्मभूषण डॉ. सुभाष कश्यप, पूर्व महासचिव, लोक सभा एवं भारत के प्रतिष्ठित संविधानविद्, प्रो. अवनीश कुमार, वैज्ञानिक एवं तकनीकी आयोग के अध्यक्ष और केंद्रीय हिंदी निदेशालय के निदेशक तथा प्रो. पूरनचंद टंडन, दिल्ली विश्वविद्यालय निमंत्रित थे।

कार्यक्रम का शुभारंभ अतिथियों द्वारा दीप-प्रज्वलन से किया गया। श्रीमती सुषमा भंडारी, विद्यालय निरीक्षक दिल्ली नगर-निगम ने अपनी अत्यंत सुरीली वाणी में सरस्वती वंदना की। विधि भारती परिषद् की महासचिव श्रीमती सन्तोष खन्ना ने अतिथियों का परिचय देते हुए उन्हें मंच पर आमंत्रित किया तथा इस कार्यक्रम के लिए

रखे गए विषय 'संसद में हिंदी : कल, आज और कल' पर प्रकाश डालते हुए बताया कि संसद राजभाषा को आगे बढ़ाने के लिए अग्रणी भूमिका निभा रही है। यहाँ सारा कार्य हिंदी में किया जा रहा है और अंग्रेज़ी में भी। जनता के अधिकांश प्रतिनिधि संसद सदस्य जनता की समस्याओं को संसद में हिंदी के माध्यम से प्रस्तुत करते हैं और कुछ संसद सदस्य अंग्रेज़ी में भाषण देते हैं। तो संसद की दीर्घा में उपस्थित भाषांतरकार उनका हिंदी में तत्काल भाषांतरण करते चलते हैं।

श्रीमती सत्या बहिन, पूर्व सांसद, राज्य सभा और संसदीय हिंदी परिषद् की अध्यक्ष ने सभी मंचासीन अतिथियों का तथा सभा में उपस्थित सभी गणमान्य श्रोताओं का हार्दिक स्वागत किया। उन्होंने सभी को संबोधित करते हुए कहा कि संसद के केंद्रीय कक्ष में हिंदी उत्सव कार्यक्रम कई वर्षों से आयोजित किया जा रहा है। हिंदी के प्रति अटूट प्रतिबद्धता रखने वाली डॉ. सरोजनी महिषी ने कई वर्षों तक इस कार्यक्रम का आयोजन किया। आज हम उनको भावभीनी श्रद्धांजलि देते हुए उनकी स्मृति को नमन करते हैं और चाहते हैं कि उनकी प्रेरणा इस कार्यक्रम में हमेशा बनी रहे ताकि हम सब देश की इस एक अमूल्य धरोहर, जन-जन की वाणी हिंदी के प्रति समर्पित हो उसका उत्सव हमेशा मनाते रहें।

इस वर्ष का राष्ट्रभाषा गौरव सम्मान सुविख्यात साहित्यकार डॉ. मुक्ता (वाराणसी), डॉ. गिरीश पंकज (छत्तीसगढ़), श्रीमती नमिता राकेश (हरियाणा) तथा त्रैमासिक पत्रिका 'हिम उत्तरायणी' के संपादक एवं मीडिया कर्मी सूर्य प्रकाश सेमवाल को दिया गया। इस कार्यक्रम के अंतर्गत कुछ पुस्तकों का लोकार्पण भी किया गया। 'मेरे मन की बातें (आलेख-कविता) डॉ. उषा देव, 'भारत में चुनाव, हिंदी की भूमिका और चुनाव सुधार' सं. सन्तोष खन्ना, 'चाँदनी में हम तुम' (काव्य-संग्रह) किरण मिश्रा, 'साहित्य समाज और स्त्री', डॉ. भावना शुक्ला की पुस्तकों का लोकार्पण मंचासीन अतिथियों द्वारा किया गया।

कार्यक्रम के अध्यक्ष डॉ. अवनीश कुमार, अध्यक्ष, वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग एवं निदेशक, केंद्रीय हिंदी निदेशालय, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार ने भी अपने विचार अभिव्यक्त किए कि किस प्रकार केंद्रीय हिंदी निदेशालय हिंदी की प्रोन्नति के लिए कटिबद्ध होकर कार्यशील है। उन्होंने कहा कि भाषा ही हमारी संस्कृति को प्रदर्शित करती है और भाषा के बिना हमारी संस्कृति अधूरी है। इसके द्वारा ही हम जीविकोपार्जन करते हैं तथा आज हिंदी न केवल भारत में बल्कि विश्व भर में अपनी पहचान बना चुकी है। आज यह राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर व्यवसाय का मुख्य साधन बन चुकी है। आज हमारी राजभाषा हिंदी ही हमारी शिक्षा और ज्ञान को पूर्णता प्रदान करने में सक्षम है।

अतिविशिष्ट अतिथि के रूप में उपस्थित प्रो. (डॉ.) पूरनचंद टंडन, प्रोफेसर, हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय ने केंद्रीय कक्ष में साल दर साल होने वाले इस कार्यक्रम की भूरि-भूरि प्रशंसा की तथा आशीर्वचन दिए। डॉ. सुभाष कश्यप ने भी आशीर्वचन दिए।

कार्यक्रम के मुख्य अतिथि डॉ. मुरली मनोहर जोशी ने अपने उद्बोधन में संसद में हिंदी की भूमिका पर अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि किस प्रकार हिंदी धीरे-धीरे संसदीय कार्यों में अपने पैर जमा चुकी है। उन्होंने कहा कि हिंदी सदैव से संसद में मुख्य भाषा रही है परंतु अब इत्तर हिंदी भाषी सांसद भी हिंदी की महत्ता को स्थापित करने के लिए हिंदी का दामन थामना ज़रूरी समझ रहे हैं और वह इस तथ्य से परिचित हो रहे हैं अगर उन्होंने राष्ट्रीय स्तर पर राजनीतिक क्षितिज पर उभरना है तो हिंदी को अपना कर ही जनजन से संवाद किया जा सकता है और साथ ही यह भी कि हिंदी न सिर्फ भारत में अपितु संपूर्ण विश्व में नया आयाम स्थापित कर रही है।

परिचय साहित्य परिषद् की अध्यक्ष श्रीमती उर्मिल सत्यभूषण ने सभी के प्रति धन्यवाद ज्ञापन किया तथा इस पूरे कार्यक्रम का सफल संचालन किया श्री अनिल वर्मा 'मीत' ने, जिसके लिए वे बधाई के पात्र हैं। कार्यक्रम के अंत में सभी ने राष्ट्रगान द्वारा देशभक्ति की लहर से केंद्रीय कक्ष को गुंजायमान किया। इस प्रकार संसद के ऐतिहासिक केंद्रीय कक्ष में हिंदी को समर्पित इस वर्ष का यह भव्य एवं अद्वितीय कार्यक्रम संपन्न हुआ।

इस कार्यक्रम की सफलता का उल्लेख करने के लिए इस तथ्य को उद्घाटित करना ज़रूरी है कि केंद्रीय कक्ष श्रोताओं से पूरी तरह भरा था और उनमें हिंदी के इस भव्य कार्यक्रम में सम्मिलित होने के लिए अतीव उत्साह देखते ही बनता था।

इस कार्यक्रम की सफलता की एक कसौटी यह रही कि लोक सभा टी.वी. ने इस पूरे कार्यक्रम को पूरे आधे घंटे तक अपने चैनल पर प्रसारित तथा बाद में पुनः प्रसारित किया। इसके लिए हम सब लोक सभा टी.वी. के प्रति अपना आभार व्यक्त करते हैं।

□

Vinod Chaudhary

---

## **National and International Socio-Legal Aspects of Environmental Issues with Special Reference to Climate Change**

The term "environment" includes air, water, and land and the interrelationships which exist among and between these basic elements and human beings and other living organisms. Ecology is the science of the intricate web of relationships between living and non-living surroundings. These interdependent living (biological organisms) and non-living (air, water, temperature, etc) components make up ecosystems eg. lakes, forests etc. Larger combination of eco systems occurring in similar climates have similar characteristics are biomes. The term bio-diversity encompasses all species of plants, animals, and micro-organisms and eco-systems and ecological processes of which they are part.

### **2. Man-Environment Relationship**

Changes in eco-systems occur continuously via slow natural process of evolution dramatic examples of change can be seen where man has altered the course of nature. The physical or biological man has been transformed into "technological" man, lacking feeling, emotions, and concern for the nature, and interested mainly in technology, precision and excellence.

### **3. Environmental Degradation and Pollution**

Environmental degradation refers to the deterioration in physical components brought by anthropogenic (or man made) process to such an extent that it can not be set right by homeostatic mechanism (a self regulatory mechanism) of environment.

The causes for environmental degradation includes (1) growth in population (2) scientific and technological development at an accelerated pace (3) ambitious developmental projects aimed at fast economic development (4) expanding industries, urban growth, and agriculture development (5) unscientific utilisation of natural resources (6) poverty (through overuse and misuse of limited resources to the point of destruction) (7) affluence (through over-consumption of resources without paying the full cost for it) (8) ignorance and lack of environmental perception, and lack of public awareness towards environment (9) philosophical outlook of the society.

#### 4. Environmental Problems, Law and Policy in India

The major environmental concerns of India today are air pollution resulting from industrial development; domestic effluents, soil erosion, deforestation, desertification, and loss of land and resources; ugly landscapes, urban sprawls and city slums resulting from burgeoning population.

India employs a range of regulatory instruments to preserve and protect its natural resources. Across the country, government agencies wield vast powers to regulate industry, mines and other polluters but are reluctant to use their power to discipline violators. The judiciary, a spectator to environmental despoliation till early 1990's, has recently assumed a proactive role of public educator<sup>1</sup>, policy maker<sup>2</sup>, super administrator<sup>3</sup>, and more generally, amicus environment. The flurry of legislation, loose enforcement and assertive judicial oversight have combined to create a unique implementation dichotomy :one limb represented by the hamstrung formal regulatory machinery comprised of the pollution control boards, forest bureaucracies and state agencies; the other, consisting of a non-formal *ad hoc* citizens and courts driven implementation mechanism.

Environmental law is an instrument to protect and improve the environment and also to control or prevent any act or omission polluting or likely to pollute the environment. An environmental lawyer's procedural armoury include: Common law tort action; public nuisance actions under Cr. P.C; a writ petition; public interest litigation; class actions; citizen's suit; and right to know<sup>4</sup>.

#### 5. The Constitution of India and the Environment

Indian Government while enacting 42<sup>nd</sup> amendment to the Constitution added Article 48A to the Directive Principles of State Policy. It declares: "***The State shall endeavour to protect and improve the environment and to safeguard the forest and wild life of the country***". A similar responsibility imposed on every citizen in the form of

Fundamental Duty-Article 51(A)(g)- ***"to protect and improve the natural environment including forests, lakes, rivers and wild life, and to have compassion for living creatures"***.

**Article 246** of the constitution divides the subject areas of legislation between the Union and the States. The State List (List II) includes public health and sanitation, agriculture water supplies, irrigation and drainage etc. The Concurrent List (List III) (under which both Union and State can legislate) includes forests, protection of wild life, mines and minerals development not covered in the Union List, population control and factories. **Article 253** of the constitution empowers Parliament to make laws implementing India's international obligations as well as any decision made at an International Conference, association or other body. Article 253 states: Notwithstanding anything in the forgoing provisions of this Chapter, Parliament has power to make any law for the whole or any part of the Territory of India for implementing any treaty, agreement or convention with any country or countries or any decision made at any International Conference, association or anybody.

The broad language of **Article 253** suggests that in the wake of the Stockholm Conference in 1972. Parliament has power to legislate on *all* matters linked to the preservation of natural resources. Parliament's use of **Article 253** to enact the Air Act and Environment Act confirms this view. The preamble to both law states that these Acts were enacted to implement the decisions reached at the Stockholm Conference.

The **Article 14, 19 (1)(g), and 21** are also find its suitable applications to protect environment. In recent times, the judiciary in India has extended to new dimensions and has stretched the meaning of '**right to life**' and '**procedure established by law**' so as to bring the environment within the ambit of Article 21. The Supreme Court, in several cases, interpreted the right to life and personal liberty to include the **right to a wholesome environment**.

## **6. Established Norms of International Environmental Law**

Norms are generally legal principles that are widely accepted. This acceptance is evidenced in a number of ways, such as, international agreements, national legislation, domestic and international decisions, and scholarly writings. The leading norms in the field of International Environmental Law are addressed below:

- (1) Foremost among these norms is principal 21 of the Stockholm Declaration on the Human Environment. Principle 21 maintains that ***'states have, in accordance with the charter of U.N. and the principles of international law the sovereign right to exploit their own resources pursuant to their own environment policies, and the responsibility to ensure that activities within their jurisdiction***

***or control do not causes damage to the environment of other states or of areas beyond the limits of national jurisdiction'***

- (2) Another widely shared norm is the duty of a state to notify and consult with other states when it undertakes an operation that is likely to harm neighbouring countries' environments, such as the construction of a power plant, which may impair air or water quality in downwind or downstream states.
- (3) States are expected to monitor and assess specific environmental conditions domestically, and disclose these conditions in a report to an international agency or international executive body created by an international agreement, and authorised by the parties to the agreement to collect and publish such information.
- (4) Another emerging norm is the guarantee in the domestic constitutions, law or executive pronouncements of several States, including India, Malaysia, Thailand, Indonesia, Singapore and the Philippines, that all citizens have a right to a decent and healthy environment. In United States, this fundamental right has been guaranteed by a handful of states but not by the federal government.
- (5) Most industrialized countries subscribe to the ***polluters pays principle***. This means polluters should internalize the cost of their pollution, control it at its source, and pay for its effects, including remedial or cleanup costs, rather than forcing other states or future generation to bear such costs. This principle has been recognised by the Indian Supreme Court as "universal" rule and applied in the Bichhri case (Indian Council for Enviro-Legal Action v Union of India) 1996 and Vellore Citizen Welfare Forum v Union of India AIR1996. More ever it has been accepted as a fundamental objective of government policy to abate pollution.
- (6) Another new norm of International Environmental Law is the ***Precautionary Principle***. This is basically a duty to see and assess environmental risks, to warn potential victims of such risks and to behave in ways that prevent or mitigate such risks. In the context of municipal law, Justice Kuldip Singh of Supreme Court has explained the meaning of this principle in **Vellore Citizens Welfare Forum Case**
- (7) ***Environmental impact assessment*** is another widely accepted norm of International Environmental Law. Typically, such an assessment balances economic benefits with environmental costs. The logic of such an assessment dictates that before a project is undertaken, its economic benefits must substantially exceed its environmental costs.
- (8) Another recent norm is to invite the input of Non-Governmental



Organizations (NGOs), especially those representing community based grassroots environmental activists. This NGOs participation ensures that people who are likely to be most directly affected by environmental accords will have a major role in monitoring and otherwise implementing the accord. This principle is mirrored in the Indian Government's Domestic Pollution Control Policy and National Conservation Policy, and is given statutory recognition in the EIA regulations of 1994.

- (9) In October 1982, the United Nations General Assembly adopted the World Charter for Nature and Principles of **Sustainable Development**. The agreement expressly recognised the Principle of Sustainable Development defined as using living resources in a manner that 'does not exceed their natural capacity for regeneration' and using 'natural resources in a manner which ensures the preservation of the species and eco-systems for the benefit of future generation'. The principle of sustainable development was also acknowledged in 1987 report '**Our Common Future**', published by the United Nations World Commission on Environment and Development. This report defined sustainable development as 'humanity's ability....to ensure that [development] meets the need of present generation without compromising the ability of future generation to meet their needs.' The sustainable development are also recognised the fourth generation of human rights. The Supreme Court as well as the Indian government have recognised the Principle of Sustainable Development as a basis for balancing ecological imperatives with development goals. Sustainable Development is a multi- dimensional concept with three interacting angles—ecology, economics and ethics. The necessary conditions for achieving sustainable development are ecological security, economic efficiency and social equity. Sustainable development does not end with the sustainability of just the environment and resource system but requires the sustainability also of economic and social system.
- (10) **Inter generational equity** is among the newest norms of International Environmental Law. It is rather an argument in favour of sustainable economic development and natural resource use. If present generations continue to consume and deplete resources at unsustainable rates future generations will suffer the environmental (and economic) consequences. Therefore, we must all undertake to pass on the future generations an environment as intact as the one we inherited from the previous generation.
- In State of Himachal Pradesh v Ganesh Wood Products (AIR 1996 SC 149) the Supreme Court recognized the significance of inter-generational equity and held a government department's approval to

establish forest based industry to be invalid because 'it is contrary to public interest involved in preserving forest wealth, maintenance of environment and ecology and considerations of sustainable growth and inter-generational equity.

- (11) The 1992 Rio de Janeiro Earth Summit articulated the norm of ***common but different responsibilities***. With regard to global environmental concerns such as global climate change or stratospheric ozone layer depletion, all nations has a shared responsibility.

### **7. Environmental Justice**

It is broadly recognized that poorer citizens are more likely to suffer the consequences of environmental pollution than other citizens, on both the national and international levels. It has also given rise to Environmental Poverty Law, or environmental justice, which seeks legal remedies to the disproportionate environmental abuse suffered by the poorer citizens.

Internationally, less affluent nations tend to have more severe environmental problems than wealthier nations. Less affluent nations lack the financial resources to purchase modern pollution control or energy efficient technologies, or to implement environmental protection policies.

### **8. North-South Tension**

World leaders of 196 countries meet at Paris at COP-21 on Earth Summit to arrive at amicable but effective agreement to reduce carbon emission at global level to address the serious threat of Global Warming and climate change. The developing and developed nations tensions are found at international level. It is clear that already, when temperatures have risen by 1°C over pre industrial era, the world is seeing weird and devastating weather events. In India, farmers are hit again and again with unseasonal rain, hail and extreme rain and temperatures, which is crippling their livelihoods, driving them to destitution and even death.

But we also know that limiting the rise of temperatures also limits the amount of carbon dioxide that can be emitted in the atmosphere. So it is about an agreement to share the global carbon budget. The stakes are high. The U.N has accepted that the indented nationally determined contributions (INDC)—actions submitted by all countries to reduce emissions by 2030—will take the world to at least 2.6°C rise. It is estimated by UN'S IPCC that the world can emit only about 2900 gt of carbon dioxide from 1870 to 2100. The industrialised nations have already emitted the bulk of the 1900 gt (giga tonnes) of Co<sub>2</sub> in the atmosphere. The world is left with 1000 gt. The aim of INDC is to surreptitiously appropriate the carbon budget. The U.S for instance has already used up 21 % of the used carbon

budget. Between now and 2030, as per its lacklustre INDC, it will take up another 8-10%. In this way, the INDC is not just a country's commitment to reduce emissions, it is its intention to occupy global carbon space. Once this space is taken, it is difficult to vacate<sup>6</sup>.

The innovation engine is our biggest hope in the battle against the global warming. The real breakthrough will be cleaner energy solutions that are affordably priced. India is willing to cut back its investments in coal if developed countries give proper financial and technological assistance to shift to cleaner energy. It's unjust to ask poor to choose either green or growth. The Breakthrough Energy Coalition could become a good example of the rich taking responsibility and leadership commensurate with their greater wealth and technical support and capability. Getting to a true breakthrough means both governments and the private sector have to be on board. Rich nations are pressuring India on its coal use, ignoring the fact that they have already occupied the carbon space the developing countries now need for their economic growth and energy requirements. "seventy eight millions homes and three hundred million people still don't have electricity in India even after 67 years of independence. Our government is desperated to provide them electricity', said environmental secretary Ashok Lavasa. With 17% of the world population, India accounts for only 4.49% of the world's electricity consumption. India is 4<sup>th</sup> biggest emitter after China, US, and EU but it's rank is 120<sup>th</sup> in terms of per capita emission.

### **9. Climate Change Have Changed Our Lives for Worse**

The rapidly changing climate in western Rajasthan has exponentially shot up the rate of evapotranspiration (sum total of evaporation from land surface and transpiration from the plants. A study by CAZRI (Central Arid Zone Research Institute) in the past four decades have shown that, the dry region of Rajasthan has witnessed a rise of temperature from 0.5<sup>0</sup> to 3<sup>0</sup> Celsius.

1<sup>0</sup> celsius rise in mercury has increased ground water consumption by 44% in western Rajasthan districts-Barmer, Bikaner, Ganganagar, Hanumangarh, Churu, Jaisalmer, Jalore, Jhunjhunu, Jodhpur, Nagore, Pali, and Sikar. According to Dr R K Goyal, principal secretary, Division of Natural Resources and Environment, CAZRI the ill effects of evapotranspiration, "The rate at which this process is increasing will surpass the available water resources in the region leading to less soil moisture affecting the yield per hectare. Secondly, it may increase the wind velocity, movements of sand dunes and can see a rise of different kinds of pests and insects<sup>8</sup>".

Farmers suicides and Naxal violence are linked to climate change also<sup>9</sup>.

## **Conclusion**

Lack of budgetary support, the plethora of 200 central and state statutes enacted regarding environment directly or indirectly, has unfortunately, not resulted in preventing environmental degradation which, on contrary, has increased over the years. In numerous cases we find the Supreme Court stepping into the shoes of the administrator, marshalling resources, issuing directions to close down factories, requiring the implementation of environmental norms, cutting through bureaucratic gridlock and so on. As a result of this drive, hundreds of the factories have installed effluent treatment plants and there is a heightened environmental awareness among the administrators, the subordinate judiciary, police and municipal officials, all of whom are involved in implementing the court's orders. More generally the Supreme Court has succeeded in building up a sustained pressure on polluters, where the pollution control boards has failed.

This new pattern of judge-driven implementation is supported by a broad political consensus. When it comes to challenging influential industries, labour intensive enterprises and municipalities, bureaucrats are glad to let the judiciary bell the cat. The public and media have generally applauded and indeed, often triggered judicial initiatives. One of the most encouraging trends during the past two decades is the growing numbers of concerned individuals, citizen groups and non-governmental organisations exerting pressure on state agencies through the courts<sup>10</sup>.

Although the expanded judicial role appears secure for the present, this trend is unlikely to continue beyond the near term. Courts dockets are full and the judges are conscious that systematic changes in the country as vast as India are unlikely to be brought about by judicial intervention alone. If judicial activism is to have a lasting impact, a political will in the form of substantial budgetary allocations for environment and increased community pressure on enforcement agencies, are imperative. Court-administered implementation can best supplement, not replace the formal agency-dependent enforcement mechanism.

## **Reforms Ahead**

Finding and implementing solutions to environment problems requires a partnership of efforts among the nations. North and South will have to forge equal partnership. It is time to launch a new era of international co-operation. Issues like debt crisis, trade policies, resources for the international financial institutions, harnessing technology for global benefit, strengthening the U.N system, and specific major threats to the environment such as global warming are inter-related<sup>11</sup>.

The agenda for reforms are large and comprehensive. Accepting the challenge to accelerate development in an environmentally responsible

manner will involve substantial shifts in policies and priorities and will be costly and this cost must be born by developed nations which they have agreed to at COP-21 the climate summit at Paris end of November to 11<sup>th</sup> of December 2015. A \$100 billion a year floor for funding developing nations beyond 2020; and a five year cycle for reviewing national pledges to take action on green house gas emissions. A historic climate deal has turned tide on global warming<sup>12</sup>.

Six years after the pervious climate summit in Copenhagen ended in failure and acrimony, the Paris pact appears to have rebuilt much of the trust required for a concerted global effort to combat climate change. The motto should be: **"you must give back to the earth, what you take from it."**



### **References**

1. M.C. Mehta v Union of India AIR 1992 SC 382 (court directions to broadcast and telecast ecology programmes on the electronics media and include environmental study in school and college curricula).
2. S. Jagannath v Union of India AIR 1992 SC 811 (directions prohibiting non-traditional aquaculture along the coast); M.C. Mehta v Union of India 1992 (Supp.2) (court directions for the introduction of unleaded petrol vehicles).
3. T.N. Godavarman Thirumulkpad v Union of India AIR 1997 SC 1228 (judicial supervision over the implementation of national forest laws); M.C. Mehta v Union of India 1992 (Supp.2) SCC 633 (directions in the Ganga Pollution Case to riparian industries, tanneries and distilleries regarding abatement of pollution).
4. Book by Divan and Rosencranz Environmental Law and Policy in India
5. ibid
6. Article "It is our turn to grow, India tells rich Nations, Times of India, Jaipur, Wednesday, December 9, 2015
7. Article Times of India, Editorial, 7 December, 2015.
8. Article Times of India, Editorial, December 2015.
9. Article Times of India, 3 December, 2015.
10. Book by Divan and Rosencranz Environmental Law and Policy in India
11. Jain A.K. book Law and Environment
12. Times of India, 11 December, 2015.

डॉ. प्रवेश सक्सेना

**समय की विसंगतियों को आईना बनाता (काव्य संग्रह) :  
'समय का सच'**

'समय का सच' संतोष खन्ना का नवीनतम काव्य-संग्रह है। सबसे पहले इसके शीर्षक ने ही मुझे सोचने को प्रेरित किया। 'समय का सच' क्या होता है? क्या कोई एक सच होता है या समय के कई सच होते हैं? क्या 'समय का सच' का साक्षात्कार किया जा सकता है? एक और प्रश्न यह कि क्या 'समय का सच' (या कई सचों) के विविध आयाम होते हैं? क्या जैन धर्म के अनेकांतवाद की तरह 'सच' बहुआयामी होता है? फिर मेरे चिंतन से उभरे इन प्रश्नों का उत्तर भी मन में कौंधा और कोई 'समय का सच' जान पाए या न जान पाए कवि तो अपने प्रतिम चक्षु से 'हस्तामलकवत्' (हाथ पर रखे आँवले) की तरह 'सच' को देख ही सकता है और देखकर समय की गति भी भाँप सकता है।

इस काव्य-संग्रह का कालखंड 21वीं शती है तो स्वाभाविक है इसमें रचित कविताओं में 'समय का सच' अपने विभिन्न आयामों में प्रतिबिंबित देखा जा सकता है। अत्यधिक प्रौद्योगिक विकास ने जीवन में अनंत बदलाव ला दिए हैं। कहा जाता है यह 'कविता का युग' नहीं है, 'कविता' कौन पढ़ता है? कविता कौन छापता है? पर 'कविता' है कि जन-सामान्य तक पहुँचने को आतुर हो चुकी है। हाँ 'समय का सच' काव्य-संग्रह की कविताओं में 'इश्क', नहीं 'श्रृंगार' नहीं, यह सामान्य जीवन की कविता है तो उसकी दुश्वारियों को, संघर्षों को और उसकी समस्याओं को स्वर देने में मुखर हैं। इसीलिए कविता की संप्रेषणीयता बढ़ी है। छंदों के बंधन से मुक्त, अलंकारों की छटा से विगल होकर भी कविता प्रवाहमयी है, लयात्मक है। सामान्यजन का (जिसे दिया है) प्रतिनिधित्व करने वाली आज की कविता, जागरूक करने वाली कविता ही कही जाएगी। वह वंचित दलित, शोषित और पीड़ित वर्ग पर अत्याचार करने वालों पर वार करने को तत्पर है।

'समय का सच' में पाठक ऐसी ही कविताओं से रूबरू होता है। छंदमुक्त होते हुए

भी इन कविताओं में 'लय' है। अतुकांत होते हुए भी 'तुक' है -- अर्थात् बेतुकी नहीं हैं। कवि जब अपनी संवेदनशीलता से जगत् और जीवन को देखता-समझता और अनुभव करता है तब उसकी सृजनशीलता कल्पना के पंख लगाकर उड़ने को तत्पर हो जाती है। ऐसे में 'शब्दों की कश्ती' पर सवार होकर वह स्वयं को व्यक्त करता है।

कवयित्री संतोष खन्ना ने संग्रह का प्रारंभ सृजन की देवी की 'वंदना' से किया है। 'कुछ नया कह', 'कुछ नया रच' -- यह संबोधन है कवि का स्वयं को। अनुभूतिप्रवण और संवेदनशील लेखक कवि शब्दों के माध्यम से दूसरों के दर्द को व्यक्त करता है। इस संदर्भ में कवि, कविता और शब्दों को लेकर छोटी-बड़ी कई कविताएँ यहाँ संकलित हैं। कुछेक पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं --

दौड़ पड़ती है कलम  
आँसू पोंछने हर आँख का ('कविता')

कविता! तुम सदा  
मेरी आँख बन कर रहना  
बाँटना दर्द सभी का  
हताशा में दे दिलासा  
टूट रही साँसों को  
जीवन सुगंध कहना!

सच में 'शब्द' की शक्ति यही है जो सहानुभूति और समानुभूति से व्यष्टि को समष्टि से जोड़ देती है। यही कारण है कि कवयित्री की कामना है --

बना रहे शब्द का साथ ('शब्द')  
तभी वे नमन करती है शब्द की सत्ता को --  
गंगा, यमुना, सरस्वती की तरह  
संवेदना-कल्पना-सृजन का संगम,  
शब्द की सत्ता को नमन  
शब्द की सत्ता को नमन!

भारतीय संस्कृति की विशेषता रही है मनुष्य का मनुष्य बने रहना -- अर्थात् मनुष्यता को बचाए रखना। संतोष जी इसीलिए 'हाशिए पर कविता' में कहती है --

मानवता के नाते कभी  
किसी के काम न आए  
या फिर इंडिया और भारत को  
एक न कर पाए  
बेकार है वह कविता।

भाव यही कि कविता के लिए, कला-कला के लिए न होकर -- 'आम आदमी की 'त्रासदी' के लिए जिम्मेदार' वर्ग पर प्रहार करने को तत्पर रहे -- सबको सतर्क करती रहे। 'आकाश' की ओर नज़र रखें पर पैर 'धरती' पर रहे यही वाक्य हैं --

आकाश पर कितना ही  
ऊँचा हो भास्कर  
किरणें तो धरती की गोद में  
मुस्कराती हैं।

'कविता' के दायित्व की, कवि के 'दायित्व' की बात बार-बार इन कविताओं में दोहराई गई है। 'आईना' शीर्षक कविता में साहित्य-समाज का दर्पण इस उक्ति को समावेशित करते हुए कहा गया है --

मेरी कविता के हाथ में  
एक आईना है  
दिखाती चलती है  
अच्छ है या बुरा  
संवेदन है या खुरदरा  
कोई भी देखे  
चाहे तो सँवार ले  
उसमें अपना चेहरा।

छोटी-बड़ी कविताओं के साथ-साथ कवयित्री ने कुछ 'हाइकू' भी लिखे हैं। वहाँ भी 'कवि' की संवेदनशीलता में ही मुक्ति की बात कही गई है --

कवि रस  
मन की मलहम  
है मुक्ति कर्म।

यही नहीं --

शब्द साधना  
तापस-सा है कर्म  
मन का मर्म

कहना न होगा संतोष जी की 'शब्द-साधना' ने समाज में जहाँ भी अन्याय है, शोषण व अत्याचार है उसके विरुद्ध बेबाकी से कहा है। 'दामिनी अभी जिंदा है' में बलात्कार जैसे भयंकर अपराध पर क्लम चलाई है तथा 'स्त्री की अस्मिता' के प्रश्नों को भी उठाया है। 'पंचतारा होटलों में मसला जा रहा, कच्ची कलियों का बचपन' और 'चिड़िया' में घर का सुरक्षित घेरा भी भक्षक बन जाता है इस समाज में। 'इतिहास में



औरतें' कविता में व्यंग्यपूर्वक वे कहती हैं --

औरतों ने नहीं  
इतिहास ने जने  
राजे-महाराजे, ऋषि-मुनि  
नायक-महानायक  
धीरोदत्त-महानायक  
औरतों का अंतरंग अस्तित्व  
नहीं जानता इतिहास  
औरतों का कोई व्यक्तित्व  
कहीं नहीं है औरतें  
इतिहास में।

स्त्री अर्थात् आधी आबादी की इस उपेक्षा से वे क्षुब्ध हैं। इतिहास में औरत को कोई जगह नहीं मिलती, परंतु --

'विरह और प्रेम राग  
खूब अलापे गए  
नायिका भेद के  
कई-कई वेद बाँचे गए।  
गणिकाएँ तो थीं  
खूब सुना गया  
उनका देह-संगीत,  
नहीं मिलती औरतें  
जिन्होंने खून, माँस-मज्जा  
से रचा,  
हर काल का इतिहास!

कितना बड़ा अंतर्विरोध है कि स्त्री को गणिका या देवी बना दिया जाता है पर उसे 'मनुष्य' नहीं माना जाता। फिर आधुनिक युग में एक और पक्ष है कि स्त्री बाजारवाद के कारण फैशन की दुनियाँ में अपनी 'देह' के नए-नए अवतारों की चकाचौंध में अपनी 'अस्मिता' को खुद खोती जा रही है। स्त्री के 'माँ' रूप में, 'बेटी' रूप पर भी कई कविताओं में संकेत हैं पर कवयित्री की चिंता यही है कि 'स्त्री-विमर्श' के लिए किए जा रहे संघर्ष क्या इसी आधुनिकता के लिए थे कि स्त्री विज्ञापन की वस्तु बन कर रह जाए। स्त्री जीवन की इस विडंबनाओं के होते हुए भी उसके 'शक्ति रूप' में पूरा विश्वास है उन्हें -

मैं ही हूँ शक्ति दुर्गा  
असुरों का महाकाल  
भूत-भविष्य और आज,  
सृष्टि के सिर पर सरताज,  
मैं ही हूँ शक्ति रूपा ।

पारंपरिक रूप में संतोष खन्ना जी नर-नारी के आदर्श संबंधों की हिमायती हैं -- एक दूसरे के बिना ज़िंदगी अधूरी समझें, नर-नारी, एक-दूसरे का महत्त्व एक-दूसरे के लिए जीने का हो प्रयत्न जब ऐसी ही भावभूमि होगी तैयार, तब आएगा अवश्य नया बदलाव, बदलेगा हर व्यक्ति, परिवार और समाज। स्त्री जीवन की त्रासदियों को संवेदनशीलता से समझते हुए उन्होंने समाज के उस आम आदमी पर भी क्लम चलाई है जो विकास के बावजूद हाशिए पर ही बना रहता है। सड़कें बनती हैं महानगरों से गाँवों को जोड़ने पर वे न तो गाँव से पलायन को रोक पाती हैं, न महानगरों में मलिन बस्तियाँ बनने से रोक पाती हैं। कितनी बदनसूरत ज़िंदगी जीने को मजबूर होते हैं मजदूर। 'किसानों की आत्महत्याएँ' कवि मन को विचलित करती हैं तो दूसरी ओर 'आतंकवाद' की समस्या। 'स्लम डॉग' फिल्म को मिले 'ऑस्कर' से वे प्रभावित नहीं होतीं, क्योंकि वहाँ ग़रीबी का नंगा नाच दिखाया गया है। राष्ट्र की अस्मिता पर प्रश्न नहीं यह? बहुत दिल को छूने वाली पंक्तियाँ हैं --

ग़रीबी के पिंजरे में कैद  
'स्लम' तड़पते परिंदे हैं ।

फिर 'सरहदों' के तनाव उन्हें परेशान करते हैं तो उधर वे 'अदेमान' में 'स्वतंत्रता सेनानियों' को शत्-शत् प्रणाम करती हैं ।

समाज में, राष्ट्र में सर्वत्र व्याप्त भ्रष्टाचार, तरह-तरह के अंतर्विरोधों को देखकर वे 'आम आदमी का नाकॉ टेस्ट' और 'मेरा भारत महान्' -- कविताओं में आजकल के हालात पर तंज है, व्यंग्य है। परेशान हो उठती हैं। 'विकास' भले ही 'मरीचिका' बनकर रह जाए पर संविधान निर्माता 'संसद' में गतिरोध पैदा करते रहें, पर्यावरण छीजता रहे। दीवाली जैसे पर्व केवल अमीरों के लिए रह जाएँ, ग़रीब बच्चों के थैलों में अधजली फुलझड़ियाँ या हवाइयाँ हों, भाव यही है कि 'इतिहास' अपने को बदल-बदल दोहराता रहे --

वही शोषण का ढंग  
नाम मुक़ाम बदल  
वर्चस्व का दीनता को  
हड़काने का क्रम ।

ऐसी परिस्थितियों में गाँधीवाद की अहिंसा त्याग कवयित्री 'क्रांतिकारी' बनना चाहती हैं। ये विधि-विशेषता जानती हैं कि कानून कैसे काम करता है, किसके पक्ष में खड़ा रहता है --

कानून बना है वेश्या  
बेबस खड़ी न्याय तुला  
बाजों, बाघों, नागों को  
चौराहे पर करके खड़ा  
हंटर बरसाना चाहती हूँ  
इन कमज़ोर हाथों में,  
बंदूक उठाना चाहती हूँ।

क्योंकि कवयित्री की कामना है कि भुखमरी, प्रदूषण, युद्ध से कोई न मरे। ऐसे आशावाद के कारण वे सपने देखती हैं कि --

आज जो कूड़ा बीनते रत्न  
आँखें चाहती हैं देखना उन्हें  
रत्न, टाटा, अंबानी बनते हुए।

इसी आशावाद के चलते उनकी कविताओं के भीतर प्रकृति भी जीवंत हो उठती है। 'नदी के भीतर, बहती एक नदी' है तो 'पेड़' हैं, 'चिड़िया' हैं। 'पेड़' जो जाति, छोटे-बड़े के भेद के परे जाकर सबको छाँह देता है, प्रदूषण का विष पीकर प्राणामृत देता है, उसके विषय में निम्न पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं --

'पढ़ लिया होगा  
उसने मेरे भारत का संविधान'

उदात्त संविधान में सब बराबर हैं पर व्यवहार में मनुष्य में समानता का अभाव है पेड़ ही सबको समान समझते हैं।

जीवन में व्याप्त इतनी निराशाओं के अँधेरों के बावजूद लेखिका आशावादी हैं, सपने देखती हैं और नैतिकता में आस्था रखती हैं। नन्हें से एक हाइकू में सरल-सा उद्बोधन है। स्वयं को, हर मनुष्य को --

सत्य का बाना  
पहन सदा चल  
न कभी छल।

'सत्यमेव जयते' जिस देश का ध्येय-वाक्य हो वहाँ जन-जन छल को छोड़ सत्य को आत्मसात् कर ले तो फिर जीवन में शांति ही शांति न हो जाए। कवयित्री का आशावाद कुछ ऐसी ही घोषणा करता है --

जीते जा चुके हैं सारे युद्ध  
फैल चुकी है कण-कण में प्रशांति ।  
आमीन, आमीन ।

कवयित्री ने जीवन और समाज में कविता के महत्त्व को रेखांकित करते हुए 'समय का सच' काव्य-संग्रह के प्रारंभ में अपने सारगर्भित सार्थक और पठनीय 'दो शब्द' के अंत में कविता की चार पंक्तियों को लिखा है :-

“लड़ लिए कितने ही कुरुक्षेत्र  
नहीं चुकती उसकी जिजीविषा  
कौन है यह सतत सेनानी  
हो सकती केवल वह कविता।”

□

---

## श्रीमती सन्तोष खन्ना

### हाइकु

गुलाब जो है  
सुगंध बिखेरता  
सभी के लिए ।

मन में नहीं  
भेद किसी के लिए  
सभी हैं प्रिय ।

नहीं है गम  
मुरझाने का उसे  
अपने लिए ।

□

रमेश चंद्र

## भारत की संविधान सभा और भारत की स्वतंत्रता

संविधान सभा का विचार 1934 में एम.एन. राय को आया था। श्री राय भारत में साम्यवादी आंदोलन के अग्रणी नेता थे और पूर्ण प्रजातंत्र के विचारक थे। 1935 में कांग्रेस ने इसे अपनी माँग बना लिया और अंग्रेजों ने इसे 1940 में स्वीकार कर लिया। 8 अगस्त, 1940 को लॉर्ड लिनलिथगो ने गवर्नर-जनरल की कार्यकारी परिषद् के विस्तार और युद्ध सलाहकार परिषद् की स्थापना की घोषणा की। इस प्रस्ताव को अगस्त ऑफर कहा गया, जिसमें अल्पसंख्यकों के विचारों को पूरा महत्त्व दिया गया और भारतीयों को अपना संविधान स्वयं बनाने की अनुमति दी गई।

- **कैबिनेट मिशन योजना 1946** : 1945 में स्वाधीनता संग्राम निर्णायक मोड़ पर पहुँच चुका था। 15 मार्च 1946 को ब्रिटिश प्रधानमंत्री लार्ड एटली ने घोषणा की कि कैबिनेट मिशन भारत जाएगा, जो प्रस्तावित संविधान सभा में सुधार के लिए अनुशंसा करेगा। इस मिशन में लॉर्ड लारेन्स, सर स्टेफोर्ड क्रिप्स और ए.वी. एलेक्जेंडर थे। तदनुसार 24 मार्च से 16 मई तक कैबिनेट मिशन भारत आया। निर्णय हुआ कि संविधान सभा की स्थापना होनी चाहिए, जिसका कार्य नए संविधान का निर्माण व अंतरिम सरकार का गठन करना होगा। 6 जून, 1946 को मुस्लिम लीग ने भी इस योजना को स्वीकार कर लिया। कांग्रेस ने इस योजना को आंशिक रूप से स्वीकार किया।

योजना के अनुसार संविधान सभा के चुनाव हुए, जो प्रांतीय विधान सभाओं द्वारा एकल संक्रमणीय मत (single transferable vote) द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व (proportional representation) के आधार पर हुए। कुल 389 सदस्यों का चयन हुआ, जिनमें से 292 राज्यों के प्रतिनिधि थे, 93 रियासतों से थे और 4 दिल्ली, अजमेर-मेवाड़, कुर्ग और ब्रिटिश बलूचिस्तान के मुख्य आयुक्त वाले प्रांतों से थे। ब्रिटिश भारत के प्रांतों के लिए नियत सीटों का चुनाव अगस्त 1946 तक हो गया, जिनमें से कांग्रेस को 208

सीटें मिलीं, रियासतों को 93, मुस्लिम लीग को 73 और अन्यो को 15 मिलीं। इस सभा का गठन सबके लिए वयस्क मताधिकार के आधार पर सीधे जनता द्वारा नहीं हुआ था, बल्कि प्रांतों की विधानसभाओं द्वारा किया गया था। चुनावों में मुस्लिमों तथा सिखों को पर्याप्त प्रतिनिधित्व न मिलने के कारण उन्हें अल्पसंख्यक होने के नाते विशेष प्रतिनिधित्व दिया गया था।

**संविधान सभा के कुछ प्रमुख सदस्य** — डॉ. राजेंद्र प्रसाद, अध्यक्ष

- सी. राजगोपालाचारी, पं. जवाहर लाल नेहरू, सरदार वल्लभभाई पटेल, डॉ. बी. आर. अंबेडकर, संविधान मसौदा-निर्माता समिति के अध्यक्ष
- हंसा मेहता, अध्यक्ष, अखिल भारतीय महिला सम्मेलन
- श्यामा प्रसाद मुखर्जी, हिंदू महासभा के अध्यक्ष
- मौलाना आजाद, शरत् चंद्र बोस, कृष्ण सिन्हा, विनोदानंद झा, श्याम नंदन प्रसाद मिश्रा, अनुग्रह नारायण सिन्हा, रफी अहमद किदवई, आसफ अली, गालिब साहिब
- मोट्टूरी सत्यनारायण, स्वतंत्रता सेनानी, राजकुमारी अमृत कौर, एन.जी. रंगा
- दीप नारायण सिंह, पी. सुब्बार्यन, कैलाशनाथ काटजू, एन गोपालस्वामी आयंगर
- टी.टी. कृष्णामाचारी, रामेश्वर प्रसाद सिन्हा, दुर्गाभाई देशमुख, कृष्ण बल्लभ सहाय
- कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी, डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन, जोहन मथाई
- प्रताप सिंह कैरों, डॉ. चिदंबरम् सुब्रमण्यम्, बी नरसिंह राजू, विधिक सलाहकार

**सीधी कार्रवाई :** कांग्रेस की भारी सफलता से चिढ़कर चुनाव के बाद मुस्लिम लीग ने कांग्रेस से सहयोग करना बंद कर दिया जिससे राजनीतिक स्थिति खराब होती चली गई। मुस्लिम लीग ने 16 अगस्त, 1946 को सीधी कार्रवाई कर दी, जिससे कोलकाता में बड़े स्तर पर हिंदू-मुस्लिम दंगे शुरू हो गए। अक्टूबर में नोआखली, टिपड़ा (पूर्वी बंगाल), बिहार, गढ़मुक्तेश्वर, अहमदाबाद और एनडब्ल्यूएफपी में सांप्रदायिक दंगे हुए।

**अंतरिम सरकार :** 2 सितंबर, 1946 को अंतरिम सरकार का गठन हुआ। इस सरकार में कांग्रेस पंडित जवाहर लाल नेहरू के नेतृत्व में शामिल हुई, परंतु मुस्लिम लीग शामिल नहीं हुई और उसने कैबिनेट मिशन योजना को दी गई स्वीकृति वापस ले ली।

**संविधान समिति की बैठक**

- भारत की संविधान सभा की बैठक पहली बार 9 दिसंबर, 1946 को हुई, जिसमें 208 सदस्यों ने भाग लिया। इस बैठक में डॉ. सच्चिदानंद सिन्हा संविधान सभा के पहले निर्वाचित परंतु अस्थायी अध्यक्ष बने।
- बाद में 11 दिसंबर, 1946 को डॉ. राजेंद्र प्रसाद अध्यक्ष और हरेंद्र कुमार मुखर्जी उपाध्यक्ष बने जो बंगाल के ईसाई और कलकत्ता विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति थे।

- बैठक में मुस्लिम लीग के प्रतिनिधियों ने भाग नहीं लिया और उन्होंने पाकिस्तान के लिए अलग संविधान सभा के गठन की माँग कर डाली।
- 13 दिसंबर, 1946 को जवाहरलाल नेहरू द्वारा एक ओबजेक्टिव रिजोल्यूशन पेश किया गया, जिसमें संविधान के सिद्धांतों का वर्णन था।
- 22 दिसंबर 1946 को इस रिजोल्यूशन को निर्विरोध अपना लिया गया।

**माउंटबैटन योजना :** मार्च 1947 को लॉर्ड वेवल के स्थान पर लॉर्ड माउंटबैटन भारत आए। हालाँकि 20 फरवरी को लॉर्ड एटली ने घोषणा की थी कि ब्रिटिश भारत को जून 1948 तक छोड़ देंगे, परंतु मुस्लिम लीग के संविधान सभा में भाग न लेने के निर्णय से उत्पन्न संवैधानिक और राजनीतिक स्थिति को समाप्त करने के लिए 3 जून, 1947 को माउंटबैटन ने कैबिनेट मिशन योजना को समाप्त करने और भारत का विभाजन 15 अगस्त, 1947 को ही करने की घोषणा कर दी। माउंटबैटन का फार्मूला था कि भारत का विभाजन हो, परंतु अधिक से अधिक एकता बनाए रखी जाए। देश के विभाजन के साथ-साथ पंजाब और बंगाल का भी विभाजन किया जाना था, जिससे इस तरह बनने वाले पाकिस्तान से कांग्रेस तथा मुस्लिम लीग दोनों की माँग किसी हद तक पूरी हो सके। पाकिस्तान के निर्माण की माँग मान ली गई, परंतु पाकिस्तान को छोटे से छोटा रखने की कांग्रेस की माँग भी मानी जानी थी। उन्होंने देश के बँटवारे के लिए नए राष्ट्रों भारत और पाकिस्तान को राजनीतिक सत्ता के स्थानांतरण के विस्तृत सिद्धांत रखे। इस योजना को डोमिनियन स्टेट्स वाले कांग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों की स्वीकृति मिली, जिसके परिणामस्वरूप पाकिस्तान का जन्म हुआ।

- पाकिस्तान के लिए एक अलग संविधान सभा का गठन हुआ। पश्चिमी पंजाब और पूर्वी बंगाल में दोबारा चुनाव हुए।
- इन क्षेत्रों के प्रतिनिधियों को निकालकर जून 1947 में भारत की संविधान सभा के सदस्यों की संख्या 299 रह गई, जिनमें 9 महिलाएँ भी थीं। कांग्रेस की 69 प्रतिशत सीटों के अलावा इसमें मुस्लिमों के लिए आरक्षित सीटों पर 28 मुस्लिम प्रतिनिधि तथा अनुसूचित जाति फेडरेशन, भारतीय साम्यवादी पार्टी और यूनियनिस्ट पार्टी के सदस्य भी थे।
- 1947 तक इसमें मुस्लिम लीग और रियासतों के प्रतिनिधि भी भाग लेने लगे।
- 22 जुलाई, 1947 को भारत की संविधान सभा ने देश का राष्ट्रीय ध्वज अपना लिया।

**भारतीय स्वाधीनता कानून 1947 :** यह कानून माउंटबैटन योजना के फलस्वरूप बना। ब्रिटिश संसद ने इंडियन इंडिपेंडेंस एक्ट को 18 जुलाई, 1947 को पास कर दिया। इस अधिनियम में विभाजन के अलावा भारत तथा पाकिस्तान की सरकारों को सत्ता के

जल्द हस्तांतरण के लिए प्रयासों का विस्तार से उल्लेख था।

- नवगठित संविधान सभा की बैठक 31 दिसंबर, 1947 को हुई।

**भारत का विभाजन और स्वतंत्रता :** इंडियन इंडिपेंडेंस एक्ट 1947 के अनुसार 14 अगस्त, 1947 को पाकिस्तान और 15 अगस्त, 1947 को भारत के स्वतंत्र होते ही देश का भारत और पाकिस्तान में विभाजन हो गया। शरणार्थियों के स्थानांतरण के साथ खून-खराबा और हिंसा शुरू हो गई। अक्टूबर 1947 में पाकिस्तान की सहायता से लुटेरों द्वारा कश्मीर पर हमले से कश्मीर भारतीय संघ में शामिल हो गया। लॉर्ड माउंटबैटन को स्वतंत्र भारत का गवर्नर जनरल बनाया गया और मोहम्मद अली जिन्ना को स्वतंत्र पाकिस्तान का। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् सरदार पटेल के अथक प्रयत्नों से भारत की छोटी-बड़ी रियासतों ने भारत में मिलने का फैसला किया।

आज जब हम स्वतंत्र नागरिक के रूप में साँस ले रहे हैं, देश के अनगिनत सेनानियों के बलिदानों का स्मरण किए बिना नहीं रह सकते। देश की आजादी के आंदोलन के दौरान हज़ारों जेल घर, जो स्वतंत्रता सेनानियों के मंदिर बन गए थे और उनकी याद में स्थापित अनेक स्मारक आज पूजनीय और प्रेरक बन चुके हैं। भारत की स्वतंत्रता की वेदी पर बलि चढ़ने वाले इन सपूतों को देश के कृतज्ञ नागरिकों का शत्-शत् प्रणाम!

**संविधान सभा की मुख्य समितियाँ और उनके अध्यक्ष**

- नियम-प्रक्रिया समिति, डॉ. राजेंद्र प्रसाद
- संविधान का मसौदा-निर्माता समिति, डॉ. बी.आर. अंबेडकर
- स्टीयरिंग कमेटी, डॉ. राजेंद्र प्रसाद
- वित्त एवं स्टाफ कमेटी, डॉ. राजेंद्र प्रसाद
- क्रेडेंशियल कमेटी, अलादी कृष्णास्वामी अय्यर
- हाउस कमेटी, बी. पट्टाभी सीतारमैया
- आर्डर ऑफ बिजनेस कमेटी, के.एम. मुंशी
- राष्ट्रीय ध्वज पर अस्थायी समिति, डॉ. राजेंद्र प्रसाद
- कमेटी ऑन फंक्शंस ऑफ कंस्टीच्युएंट एसेंबली, जी.वी. मावलंकर
- राज्य समिति, पंडित जवाहर लाल नेहरू
- मौलिक अधिकारों, अल्पसंख्यकों और जनजातीय तथा असम्मिलित क्षेत्रों पर सलाहकार समिति, वल्लभभाई पटेल
- अल्पसंख्यक उपसमिति, एच.सी. मुखर्जी
- मौलिक अधिकार उपसमिति, जे.बी. कृपलानी
- पूर्वोत्तर सीमावर्ती जनजातीय क्षेत्र और असम असम्मिलित तथा अंशतः असम्मिलित



क्षेत्र उपसमिति, गोपीनाथ बारदोलाई

- सम्मिलित और अंशतः सम्मिलित क्षेत्र (असम के क्षेत्रों के अतिरिक्त) उपसमिति, ए.वी. ठक्कर
  - संघीय शक्तियाँ समिति, जवाहर लाल नेहरू
  - संघीय संविधान समिति, जवाहर लाल नेहरू
- संविधान निर्माण का कार्य इन पाँच चरणों में पूरा हुआ --
- पहले समितियों ने विभिन्न मुद्दों पर रिपोर्टें प्रस्तुत कीं,
  - बी.एन. राव ने इन रिपोर्टों तथा अन्य देशों के संविधानों की रिसर्चों के आधार पर प्रारंभिक मसौदा तैयार किया।
  - डॉ. बी.आर. अंबेडकर की अध्यक्षता वाली संविधान निर्माता समिति ने संविधान का विस्तृत मसौदा तैयार करके संविधान सभा के विचार के लिए प्रस्तुत किया।
  - मसौदा-संविधान पर विचार करके उसमें संशोधन सुझाए गए।
  - 26 नवंबर, 1949 को संविधान सभा ने संविधान के मसौदे को अंतिम रूप दे दिया, जिसमें कांग्रेस असेंबली पार्टी के विशेषज्ञों ने विशेष भूमिका निभाई।
- संविधान सभा ने 22 जनवरी, 1950 को 'जन गण मन' राष्ट्रगान के रूप में अपनाया और 'वन्दे मातरम्' के पहले दो पदों को 'राष्ट्रगीत' के रूप में अपनाया।
- 24 जनवरी, 1950 को डॉ. राजेंद्र प्रसाद भारत के प्रथम राष्ट्रपति निर्वाचित हो गए।
  - संविधान 26 जनवरी, 1950 को लागू हो गया जिससे भारत गणतंत्र देश बन गया। 1952 में नई संसद के चुनाव होने तक यही संविधान सभा भारत की संसद के रूप में कार्य करती रही।
  - पहले संविधान निर्माता सभा के रूप में इसकी बैठकों की अध्यक्षता डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने की थी और संसदीय कार्य करने पर गणेश वासुदेव मावलंकर ने की थी।
  - संविधान सभा ने अपना कार्य 2 वर्ष 11 महीने 18 दिनों में पूरा कर दिया।
  - अपने अस्तित्व के दौरान सभा ने कुल 11 सत्रों में 166 दिन की बैठकें की।
  - संविधान सभा ने संविधान निर्माण का कार्य कुल 64 लाख रुपए के खर्च पर किया।

□

प्रो. गगनदीप सिंह

## चक्रव्यूह : एक अध्ययन

साहित्य का जन्म मनुष्य के जन्म के साथ हुआ है। पहले इस का पद्य रूप (कविता) अस्तित्व में आया और फिर गद्य (गल्प) रूप अस्तित्व में आया। हिंदी साहित्य कई शताब्दियों पहले अस्तित्व में आ गया था। इसकी जड़ संस्कृत भाषा के साथ जुड़ती है। विश्व साहित्य की सबसे पुरातन पुस्तक 'ऋग्वेद' की रचना पंजाब में हुई थी इसलिए अगर हिंदी साहित्य का आरंभ भी पंजाब से मान लिया जाए तो कोई अतिरंजना नहीं होगी। डॉ. हरमहेंद्र सिंह बेदी कहते हैं कि "पंजाब में गुरुमुखी लिपि में उपलब्ध हिंदी साहित्य के हिंदी साहित्य इतिहास को सिद्ध कर दिया। अगर हिंदी साहित्य इतिहास का पुनर्लेखन हुआ तो जरूर हिंदी साहित्य का आरंभ पंजाब से माना जाएगा, क्योंकि हिंदी साहित्य के पहले कवि चंदवरवाई का जन्म पंजाब के लाहौर शहर में हुआ था। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद भी यहाँ पर रचे गए थे।"

पंजाब का हिंदी साहित्य पूर्व स्वतंत्रता काल के समय बहुत समृद्ध रहा। पंजाब के हिंदी लेखकों ने यहाँ अपनी रचनाओं के द्वारा अंग्रेजों के विरुद्ध कई आंदोलन चलाए, वहीं सामाजिक कुरीतियों की नींव को हिला कर रख दिया। कुछ लेखकों ने अपनी कलम के द्वारा लोगों के सदाचार में आई गिरावट को दूर करने के लिए बहुत उपाय किए। गुरुदत्त, मोहन राकेश, कृष्णा सोबती, सुरेश सेठ, राकेश, राजी सेठ, वरिंद्र, पृथ्वीनाथ शर्मा, भीष्म साहनी आदि पंजाब के प्रसिद्ध लेखकों में से हैं जिन्होंने स्वतंत्रता काल के दौरान पंजाब के हिंदी साहित्य को समृद्ध किया। पंजाब के भी कुछ प्रसिद्ध लेखक जैसे अमृता प्रीतम, बलराज साहनी, सोहन सिंह शीतल, दवेन्द्र सत्यार्थी आदि की बहुत सारी रचनाएँ मिलती हैं।

मेरे इस खोज पत्र का विषय 'चक्रव्यूह : एक अध्ययन' है। 'चक्रव्यूह' एक कहानी है जो हिंदी के प्रसिद्ध कहानीकार 'सैली बलजीत' की रचना है। सैली बलजीत की लगभग सारी कहानियों का विषय सामाजिक है। डॉ. सुधा जैन पंजाब के प्रसिद्ध कहानीकार सैली बलजीत ने निम्न-मध्यवर्ग और निम्न वर्ग के आर्थिक तंगी से ग्रसित लोगों को अपनी कहानियों का पात्र बनाया है। उनकी दृष्टि उस दीनहीन मनुष्य पर केंद्रित है, जिस को जीने के लिए कठिन संघर्ष करना पड़ता है।

सैली बलजीत की 'अंतराल', 'उसके हिस्से की छाया', 'उसके लौटने तक', 'चाबी वाला खिलौना', 'वह आदमी नहीं था', 'कोई भी नहीं', 'मुखौटों वाला आदमी', 'दौड़ अभी जारी है' आदि उनकी और प्रसिद्ध कहानियाँ हैं। मेरे विषय का संबंध उनकी 'चक्रव्यूह' कहानी के साथ है।

इस कहानी में सैली ने मनोवैज्ञानिक ढंग से पुलिस मुलाजिम की मनोदशा का चित्रण किया है। ग्रीष्म ऋतु में वह पुलिस ड्राइवर जम्मू से जालंधर जा रहा है और तीन घंटे बीत जाने के बाद वह अपने साधारण आम दिनों को याद करता है कि यदि वह ड्यूटी पर न होता तो आज का दिन वह परिवार के साथ बिताता। उसे छोटे-मोटे काम निपटाने थे। उसकी बेचैनी गर्मी और धूप के कारण बढ़ती जा रही थी। गाड़ी के बीच पड़ी लाश के कारण वह विचलित था। उसकी बेचैनी सैली अपनी कहानी की पक्तियों द्वारा व्यक्त करता है --

'उसको सबसे ज़्यादा चिंता इस बात की थी कि जितनी जल्दी हो सके, वह जालंधर पहुँच सके। पर, अभी जम्मू से चले हुए तीन घंटे ही हुए थे और वह आराम से कहीं बैठकर सुस्ताने की इच्छा लिए कहीं भी रुका नहीं था।

इन पक्तियों में उसकी बेचैनी उभर कर आ रही है क्योंकि वह कहीं भी रुकने का आह्वान होते हुए भी कहीं रुक नहीं सकता था। इस कहानी में मुख्य पात्र जैसे-जैसे अपने गंतव्य की ओर बढ़ते जा रहा है वैसे ही वह एक नई से नई समस्या रूपी चक्रव्यूह में फँसता जा रहा है। महाभारत के पात्र अभिमन्यु को चक्रव्यूह भेदने के लिए अंदर जाने का रास्ता तो पता था पर वह बाहर आने का रास्ता नहीं जानता था। इसी तर्ज पर कहानी का पात्र अपनी समस्या रूपी चक्रव्यूह में अफसरों की चापलूसी करने चला तो जाता है पर बाहर आना उसके वश में नहीं है।

यदि अभिमन्यु उस चक्रव्यूह में न जाता तो पांडवों का भारी नुकसान होना था वैसे ही यदि मुख्य पात्र इस चक्रव्यूह में न फँसता तो उसके परिवार का नुकसान हो जाना था। महाभारत का अभिमन्यु और इस कहानी का मुख्य पात्र अपने-अपने चक्रव्यूह में न चाहते हुए भी प्रवेश कर जाते हैं। उसकी समस्या यह है कि वह रुक कर अपनी भूख मिटाना चाहता है पर पारिवारिक मोह के बंधनों में उलझे होने के कारण वह अपनी भूख के साथ पारिवारिक मोह को अप्रत्यक्ष ढंग के साथ उजागर किया है यद्यपि उस आदमी की लाश की उसको उतनी चिंता नहीं। यह आदमी वैष्णो देवी दर्शन करते समय गोली का शिकार हुआ था। इस कहानी में सैली ने आतंकवाद को भी अपने विषय के साथ जोड़ दिया है। आतंकवाद के कारण कहानी में समस्या की जड़ पैदा हुई है जिसने पवित्र जगह पर मासूमों की जान ली। वास्तव जिंदगी में भी समाज की सबसे बड़ी समस्या आतंकवाद ही है। वह जालंधर पुलिस स्टेशन पहुँच कर चैन की साँस लेता है पर अभी

वह एक भ्रम में है। कहानी की रोचकता यहाँ पैदा हो जाती है जब पुलिस वाले लाश लेने के लिए मना कर देते हैं। सैली की कहानी पुलिस के प्रबंध को इस तरह पेश करती है, 'उनको वह रात पुलिस की गाड़ी में ही गुज़ारनी पड़ी थी उनको पूरी रात लगभग जागते ही रहना पड़ा। बीच-बीच में वह उठकर खुली हवा में टहलता पर नींद फिर भी उसे घेर लेती। उसको दूसरी सुबह तक इंतज़ार करना था।'

मुख्य पात्र चाहे सरकारी काम के लिए गया परंतु उसकी दशा दया योग्य है। सरकारी दफ़्तरों में होती धक्केशाही का भी साथ में चित्रण किया है अगर सरकारी व्यक्ति को पुलिस स्टेशन की क़दर नहीं तो साधारण जन-जीवन की क्या दशा होती है इसको समझना मुश्किल नहीं।

कहानी में लाश के रूप में किन्नर को पेश किया गया है। मुख्य पात्र पुलिस प्रबंध से निराश होकर सीधा किन्नरों की बस्ती में चला जाता है। कहानी के इस दौर पर आकर कहानीकार ने किन्नरों के समाज को बहुत ही सहज ढंग से रचनात्मक रूप दिया है। किन्नरों का आचार-विचार उसकी इन पक्तियों में व्यक्त होता है :--

उसके पीछे इकट्ठे हुए जनाना लिबास पहने हुए कई किन्नर चलने लगे थे। होठों पर भद्र किस्म की सस्ती-सी लिपस्टिक लगाई हुई थी। मुँह में पान को चबाते हुए और मजाक करते हुए बाहर सड़क पर आ गए थे।

इन पक्तियों में किन्नरों के रहन-सहन, पहनावा, बोली, खान-पान को कहानीकार ने बयान किया है उसकी समस्या का अंत यहाँ नहीं होता क्योंकि वह भी उस लाश को लेने से मना कर देते हैं। जैसे एक नेता चुनाव जीतने के लिए लोगों के साथ मीठी-मीठी बातें करता है ऐसे ही वह अपनी समस्याओं को खत्म करने के लिए उनको प्रवचन देता है पर वह असफल रहता है। गले पड़ी इस समस्या से उसका छुटकारा नहीं हो रहा। म्युंसीपल कारपोरेशन के दफ़्तर में चक्कर लगाने से भी उसका कुछ नहीं सँवरता इसलिए वह गुस्से में कहता है :--

“कहाँ-कहाँ मैं गाड़ी में लदी लाश को लेकर भटकता रहूँ? बदबू से यदि हमारा यह हाल है तो रास्ते में आने-जाने वालों का क्या होगा। कौन सुनता है सभी साले अपनी सकिन बचाते हैं।”

कहानीकार ने समाज पर व्यंग्य किया है जो अपने आप को बचाने के लिए दूसरे की समस्या की परवाह नहीं करता। वह सुप्रीडेंट के घर भी जाता है पर वहाँ जाकर भी उसका कुछ भी नहीं सँवरता बल्कि उल्टा उसको ज़लील होना पड़ता है। कहानीकार ने समाज में अफ़सरो की छोटी सोच को चित्रित किया है। जिस लिए मुख्य पात्र को रविवार के दिन जालंधर में भागना पड़ रहा है। इस स्थिति में वह अपनी तरफ़ से खर्च किए गए रुपयों का हिसाब लगा रहा है और इसके भुगतान के लिए वह कई तरह की स्कीमें घड़ रहा है।

“उसने मन ही मन हिसाब बनाया था कि यहाँ से वहाँ टेलीफोन घुमाते हुए उसने अपनी जेब से लगभग दो सौ रुपये खर्च कर दिए थे। उसको मिलना क्या था इस ड्यूटी मात्र सफरी भत्ता बस और ऊपर से टेलीफोन पर आए खर्च को वह कहाँ से एडजस्ट करेगा। गाड़ी खराब होने का जाली बिल ले सकते हैं वह कहीं से डीजल डलवा कर रसीद तो उसने कल ही ले ली थी पर डीजल एडजस्टमेंट कम होता है।”

समय-समय पर पुलिस मुलाज़िम/कर्मचारी को भ्रष्ट कहकर अपमान करने वाले लोगों और अफसरों के लिए ये कहानी एक सुझाव देती है कि किसी भी महकमे से भ्रष्टाचार को खत्म करने के लिए ये ज़रूरी है कि वह अपने मुलाजमों को किसी भी ड्यूटी के लिए सही भुगतान करे। दो दिनों की परेशानी झेलने के बाद वह कुछ आराम करने के लिए ढाबे में आता है तो उसको समाज-समिति के कुछ मैबर मिलते हैं जो उसको पेश आ रही समस्याओं को पहले से ही जानते हैं। उनकी हमदर्दी जताने पर मुख्य पात्र अपने इंसानी स्वभाव अनुसार अपनी परेशानियों का सारा चिढ़ा उनके सामने खोल देता है।

सैली ने इस पड़ाव पर आकर समाज समिति की भूमिका का इस तरह चित्रण किया है कि जैसे वह कहना चाहते हो कि बेशक समाज के ज़िम्मेदार अफसर, अपने फर्ज़ से मुख फेरे हैं पर साधारण व्यक्ति की बनाई संस्था अफसरशाही के लिए एक सबक है। समाज समिति के सदस्य उस पुलिस ड्राइवर को होंसला देते हुए कहते हैं कि हज़ार बारह सौ की बात है न? हमारी संस्था इसकी ज़िम्मेदारी ले रही है अब किसी के पास मत जाना, समझा हमारे साथ चल-ठीक?

उसकी सारी समस्या के अंत में सैली ने उसकी मनोदशा का चित्रण किया है। वह पुलिस वाला पुलिस प्रबंध और म्यूंसीपल कमेटी के प्रति रोष में है पर समस्या के समाधान हो जाने के बाद वह खुश है। साधारण व्यक्ति का स्वभाव इसी तरह का होता है। वह अपने साथ हुई नइंसाफी को सिर्फ वहीं तक याद रखता है जब तक उसका हल नहीं हो जाता। सैली ने इस खूबसूरत कहानी द्वारा साधारण भारतीय की ड्यूटी, समस्या और भ्रष्टाचार का चित्रण किया है जिसकी असल वजह खुद साधारण व्यक्ति है जो अपनी इन समस्याओं के हल के साथ ही इसकी जड़ में पड़े हुए गंदे सिस्टम के विरुद्ध आवाज़ उठानी भूल जाता है।

□

### संदर्भ

1. डॉ. हरमहेंद्र सिंह बेदी ‘पंजाब का हिंदी साहित्य : दर्पण और प्रतिबिंब’, पंजाब के हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ. 29
2. डॉ. सुधा जैन, ‘सैली बलजीत की कहानियाँ’ घरोंदे से दूर, सैली बलजीत, पृ. 7
3. सैली बलजीत, घरोंदे से दूर, पृ. 26, 29, 32-33, 34, 36-37

Premnath Manaen

---

## On the Flight of A Skylark Trail

That Poet Birbhadra Karkidholi is a poet *par excellence* is a proposition beyond controversy is a fact that has strong and unshakable foundations. The book entitled *Birbhadra Karkidholi, The Flight of a Skylark*, edited by the renowned Urdu-Hindi Ghazal poet, and a scholar and literary critic of Hindi, English and Urdu literature, and an eminent litterateur Prof Dr. Om Raz, is a solid witness to that fact.

Birbhadra is a widely read and accepted poet in Sikkim, Darjeeling and the Nepali speaking regions and pockets of North-Eastern region of India and beyond. Moreover, he is widely read and highly appreciated poet in Nepal too. Serious readers and appreciators of Birbhadra's writings, be it poetry or short stories, were so much impressed that they wanted to take the gems from the garden of Birbhadra to cross-lingual arenas so that the readers from other language groups may be able to test the nectar of his creations and be benefitted. Thus, the serious readers having mastery over the source and target languages, be it Nepali-Hindi, Nepali-Bengali, Nepali-Assamese, Nepali-Boro, Nepali-Tamil, Nepali-Telugu etc., endeavoured to translate his poetry and stories. So much so that some of his poems or excerpts thereof have been translated even from Hindi to English. Prof. Raz has done a perfect work towards that end in the above mentioned anthology.

Thus, we have two volumes of English translation of poet Birbhadra's collection of poems: *A Journey of Letters* and *Pristine Stroke*; one volume of English translation of collection of short stories: *Expression of Words*, two volumes of Hindi translation of collection of poems: *Tumne Jivan To Diya*, *Shabdon kaa Kohoraa*, and *Samaadhisth Akxar*, one volume of Asamese translation of collection of poems: *Birbhadra Karkidholir Nirwachit Kavita* and one volume of Boro translation of collection of poems: *Birbhadra Karkidholikaa Ek Mutthi Kavita*. Apart from this array of translated volumes, several of his poems have been translated in different Indian languages.

Poet Birbhadra is among very few modern Nepali poets who have been not only translated into English among other Indian languages, but have the honour of being critically analysed and appreciated by a host of major scholars, critics and litterateurs in an anthology wholly devoted to him, the first such work being *Birbhadra Karkidholi: The Flight of a Skylark*.

*Birbhadra Karkidholi: The Flight of a Skylark* contains two parts. Part A contains Short Stories, Part B contains Poetry.

Part A includes five erudite papers from four eminent scholars, viz., Prof. Om Raz, Prof. Qamar Qadir Iram, Dr. Poonam Matia and Dr. Geeta Dogra.

Part B includes scholarly and incisive appreciations from eminent literateurs Dr. Satish Kumar, Prof. Om Raz, Srijana Subba, Dr. Meena Naqvi, Dr. Archana Tripathi, Arjun Pradhan, Premnath Manaen, Dr. Kamla Sankrityayan, M.S. Venkata Ramaiah, Harish K. Thakur, Santosh Khanna, Prof. Dr. Suresh Singhal, Dr. Rajni Chhabra.

This array of formidable scholars, poets, writers and critics has presented analyses and critical evaluation of Birbhadra's literary works with such accuracy, profundity, lucidity and deep insights that any non-Nepali reader going through them will be able to know and understand Birbhadra like the back of one's hands. The present anthology is absolutely successful in its efforts of making poet Birbhadra Karkidholi known to the English readers. For this kudos to Editor Prof Om Raz and publisher Santosh Khanna (Founder-Editor *Mahila Vidhi Bharati*). They have done a substantial historical work of lasting value by bringing out the first of this genre of work on poet Birbhadra. For this, I would like to express my personal deep felt gratitude to the duo, as well as gratitude on behalf of the entire Nepali literary world.

While *Birbhadra Karkidholi, The Flight of a Skylark* is the first English anthology entirely devoted to poet and short story writer Birbhadraji, the first ever Nepali monograph on poet Birbhadra was *Samaalochkiya Drishtimaa Kavi Birbhadra*. Selected and edited by Premnath Manaen and published in 2012, this anthology includes critical appreciations of poet Birbhadra by twenty-four major Nepali critics. An interesting thing about this book is that it included the first ever critical evaluation of poet Birbhadra's second collection of poems *Aabhaash*. Entitled *Sandarbhamaa Birbhadrako Aabhaash*, written by Premnath Manaen. Before that, Birbhadra had not attracted critics' attention. Closing his pen, Manaen had predicted *thus Birbhadra's literary future looks bright*. And the rest is the history, and the present.

But after 29 years, we are here, standing on a different plane. He is no more a nervous shaky emerging poet of late 1980s, but a well established leading poet with his own distinctive marks and following. His

own style and structure. A poet who has so far become the subject of three M. Phil's. Not only that, very recently one acclaimed scholar and critic from Darjeeling is all set to pursue his Ph.D. from Tribhuvan University, Kathmandu — on very our poet Birbhadra.

This is not the last, more of such honours will be coming on his way. More accolades. Replying my questions on these developments, he answered over the phone, "It humbles me. Puts more responsibilities on my shoulders. And it's fearful. The burdens. You see. ... You have to live it to understand it fully."

Poets and writers are essentially social beings, but some are very actively involved in activities aimed at bringing about social changes, some are not. Some social beings are anti-socials but anti-socials too are social beings. Poet Birbhadra is all for social change, a pro social welfare, proactive social being. He actually takes initiatives for initiating social awareness and changes. The issues he deals in his poems and short stories are the issues that he faces in his everyday life, first hand in the society he lives in. He has lived those issues, felt them closely, and struggled with those problems. That is one of the reasons his writings pierce the softest corners. Social changes that poet Birbhadra talks about in his poems and short stories are therefore not empty slogans. They are his realities, his beliefs. Those are the *life* that the poet says he is looking for within his life.

So, we should not be surprised to see him as the Founder President of Dr. Ambedkar Smriti S.C. Sadan in his native village since 1995. In the span of these 22 years since its inception, this Sadan has taken many initiatives to uplift the social conditions of the oppressed class, especially the oppressed S.C. communities. Under his principled leadership, multitude of cases of social injustice have been solved. He has fought against the odds to provide justice to the oppressed. Among other works, this Sadan has done works in the areas of distressed children, widows, and abused women. Under the banner of Dr. Ambedkar Smriti S.C. Sadan, poet Birbhadra has fought for social justice and against caste system practically and by his pen. Appreciating his initiatives, he has been recently appointed the president for 23 G.P.s in his native village.

Apart from this, poet Birbhadraji is also a Founder-Chairman of an NGO, SHEEWEL, which works in the areas of social changes, health, environment, education and welfare. SHEEWEL has done commendable works like planting seven thousand saplings on both sides of a 2 km stretch of village road. The most encouraging aspect of this project was that saplings were brought along by over five hundred volunteers. In its cleanliness drive, it has reclaimed a spot used as open public toilet, and cleaned and renamed it SHEEWEL Viewpoint, the panoramic views of the mountains around from this spot is a unforgettable feast to the eyes.



SHEEWEL has organized bilingual literary meets. It plans to hold such programmes and seminars on regular basis in future. At the same time, it plans to organize regular literary programmes and activities to encourage the use of National language Hind in non-Hindi speaking areas of the hills.

SHEEWEL plans to social welfare programmes in future. Giving shelter to distressed children, abused and oppressed women, and providing home to the homeless senior citizens, environmental awareness and drive against human trafficking and drug abuse are some of the area it envisions to work in positive way in future.

Though he is always on the move, Birbhadraji manages to orchestrate various works on different levels. In between, he edits and publishes *Prakriya*, his passion for the last thirty years. *Prakriya* has become an iconic Indian Nepali literary magazine, and of late it has been serving as a bridge between Nepali and other languages of our great nation. As editor and publisher of this one of the longest surviving Nepali literary magazines in our recent memories, Birbhadraji has worked tirelessly day in and day out to make it a success. He has left no stone unturned to make it a success. There were times when he had to mortgage his beloved wife's ornaments in order to arrange for the funds for its publication.

Coming from the working class background, Birbhadra has struggle a lot in life, seen lots of ups and downs. He has been put down, wronged, bullied, oppressed. In many of his poems, the struggles of his life and deepest of his hurts and efforts to get over them reverberates. A practical truth of the poet's past is etched indelibly in these lines. They powerfully express his feelings reflecting this naked reality:

*I asked clouds, fog and mist;  
Birbhadra! You have no sky — they say  
I asked the higher, higher heights,  
Birbhadra! You have no ground — they say!*

*I have no house, no mansions, Sirs,  
Not even like ruins  
What I have is just a bit different from a shack*

I have had the honour to be the guest in his shack for many times. The most striking thing about that *real* shack was neatly kept two big bookcases filled with books. Things have changed since. The shack is no more shack, but the books are still there, increasing in numbers and genre, as the erstwhile shack is being turned into research library for the gen next. This reveals another aspect of poet Birbhadra's multifarious planes.

We just wish him best wishes and loads of success in his literary activities which is his life and the life he is looking for within his life.

□

## लेखक मंडल

डॉ. योगेंद्र नाथ शर्मा 'अरुण' : डी.लिट., पूर्व प्राचार्य एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग, 74/3, न्यू नेहरू नगर, रुड़की-247667, **E-mail** : ynsarun@gmail.com

सन्तोष खन्ना : मुख्य संपादक, 'महिला विधि भारती' त्रैमासिक पत्रिका

डॉ. सुदर्शन वर्मा : विभागाध्यक्ष, विधि विभाग, विधिक अध्ययन विद्यापीठ, बाबा साहेब भीमराव अंबेडकर केंद्रीय विश्वविद्यालय, लखनऊ

डॉ. निरुपमा अशोक : प्राचार्या, भगवानदीन आर्य कन्या स्नातकोत्तर, महाविद्यालय लखीमपुर खीरी

डॉ. साधना गुप्ता : 'व्याख्याता', राज. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झालावाड़, द्वारा / के.एल. गुप्ता 'एडवोकेट', मंगलपुरा टैंक, झालावाड़ (राजस्थान)

मोबाइल : 9530350325, **E-mail** : sadhanagupta0306.sg@gmail.com

डॉ. सूर्यबाला : 504, रुनवाला सेंटर, गावंडी स्टेशन रोड, देवनार, मुंबई-400088

**Dr. Bal Krishan Chawla** : Assistant Professor, Seth G.L. Bihani S.D. Law (P.G.) College, Sri Ganganagar, Rajasthan

**Ms. Shilpa Kwatra Chawla** : Lecturer Sacrad Heart Convent school, Sri Ganganagar, Rajasthan.

विपिन कुमार सिंह : शोध छात्र, विधि विभाग, इलाहाबाद, विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, मोबाइल : 9335480740, **E-mail** : vipks@rediffmail.com

सुशांत सुप्रिय : ए-5001, गौड़ ग्रीन सिटी, वैभव खंड, इंदिरापुरम, गाजियाबाद-201014 (उत्तर प्रदेश), मोबाइल : 8512070086,

**E-mail** : sushant1968@gmail.com, sushant1968@icloud.com

डॉ. उषा देव : पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर, माता सुंदरी कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

डॉ. प्रतिभा चौधरी : कॉलेज ऑफ लॉ, आई.पी.एस. ऐकेडमी, इंदौर

रेनू नूर : के-292, शकूरपुर, आनंदवास, दिल्ली-110034

**Vinod Chaudhary** : Research Scholar & Guest Faculty, JNVU, LAW FACULTY, Jodhpur

डॉ. प्रवेश सक्सेना : पूर्व प्रोफेसर, जाकिर हुसैन कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

रमेश चंद्र : परामर्शी, भारतीय खाद्य सुरक्षा और मानक प्राधिकरण, नई दिल्ली

प्रो. गगनदीप सिंह : पी.जी. विभाग पंजाबी, आर.आर. बाबा डी.ए.वी. कॉलेज फॉर गर्ल्स, बटाला

**Premnath Manaen** : New Rangia, Siliguri, W.B. Darjeeling

**E-mail** : prmaneen@hotmail.com

### विधि भारती परिषद् के महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

1. अनुवाद के नये परिप्रेक्ष्य, सन्तोष खन्ना, विधि भारती परिषद्, मूल्य : 500/- रुपए
2. हिंदी और भारतीय साहित्य में महिला सरोकार, सं. : सन्तोष खन्ना, 2016, मूल्य : 450/- रुपए
3. सामाजिक-विधिक सरोकारों की संस्कृति, लेखिका : सन्तोष खन्ना, 2012, मूल्य : 77/- रुपए
4. इतिहास बनता समय, लेखिका : सन्तोष खन्ना, 2012, मूल्य : 300/- रुपए
5. 'क्या पाया? क्या खोया?' (कहानी-संग्रह), डॉ. उषा देव, मूल्य : 200/- रुपए
6. रोशनी, (उपन्यास), लेखिका : सन्तोष खन्ना, 2013, मूल्य : 410/- रुपए
7. 'संग्राम शेष है' (कहानी-संग्रह), डॉ. उषा देव, मूल्य : 250/- रुपए
8. 21वीं शती में नारी : कानून और सरोकार, विधि भारती परिषद्, मूल्य : 350/- रुपए
9. 'क्या मैं गलत थी?' (कहानी-संग्रह), डॉ. उषा देव, मूल्य : 200/- रुपए
10. 21वीं शती में मानव अधिकार : दशा और दिशा, विधि भारती परिषद्, मूल्य : 250/- रुपए
11. भारत का संविधान : अनुचितन के नये क्षितिज, विधि भारती परिषद्, मूल्य : 250/- रुपए
12. भारतीय कानूनों का समाजशास्त्र, सन्तोष खन्ना, मूल्य : 500/- रुपए (विधि, न्याय मंत्रालय द्वारा पुरस्कृत)
13. Dimensions of Environmental Law, Ed. Santosh Khanna, Price : 400/-Rs.
14. Reappraisal of the Constitution, Ed. Santosh Khanna, Price : 350/-Rs.
15. Human Rights Today, Ed. Santosh Khanna, Price : 500/-Rs.
16. The Consumer Protection Law and the Rights of Consumers  
Vidhi Bharati Parishad, Ed. Santosh Khanna, Price : 400/-Rs.
17. स्मृतियाँ (कहानी-संग्रह) लेखक : अख्तरुल हनीफ, विधि भारती परिषद्, मूल्य : 100/- रुपए
18. उपभोक्ता संरक्षण कानून और न्याय, विधि भारती परिषद्, मूल्य : 250/- रुपए
19. 'साक्षी' (कविता-संग्रह), सन्तोष खन्ना, मूल्य : 60/- रुपए
20. 'भावी कविता' (कविता-संग्रह), विधि भारती परिषद्, सन्तोष खन्ना, मूल्य : 120/- रुपए
21. 'संत जोन', (नाटयानुवाद), सन्तोष खन्ना, मूल्य : 245/- रुपए
22. पर्यावरण एवं पर्यावरण संरक्षण कानून, विधि भारती परिषद्, सं. सन्तोष खन्ना, मूल्य : 200/- रुपए
23. 'तुम कहो तो!' (मौलिक नाटक) लेखक : सन्तोष खन्ना, मूल्य : 125/- रुपए
24. 'कजरी' (कथा-संग्रह) लेखिका : डॉ. उषा देव, मूल्य : 175/- रुपए
25. 'द्रौपदी जिंदा है' (कथा-संग्रह) लेखिका : डॉ. उषा देव, मूल्य : 150/- रुपए
26. 'खुशी के पल' (कथा-संग्रह) डॉ. सरस्वती बाली, मूल्य : 150/- रुपए (हिंदी अकादमी द्वारा पुरस्कृत)
27. सूचना का अधिकार अधिनियम : कार्यान्वयन और चुनौतियाँ, सं. सन्तोष खन्ना, मूल्य : 250/- रुपए
28. 'अब की लड़का नहीं' (कहानी-संग्रह) लेखिका : डॉ. उषा देव, मूल्य : 250/- रुपए
29. 'आज का दुर्वासा!' (कहानी-संग्रह), लेखिका : सन्तोष खन्ना, मूल्य : 250/- रुपए
30. 'सन्धि-पत्र' (कहानी-संग्रह), लेखिका : डॉ. उषा देव, 2011, मूल्य : 300/- रुपए
31. 'भारत की संसद और सामाजिक सरोकार', सं. सन्तोष खन्ना, 2011, मूल्य : 350/- रुपए
32. 'सब सुंदर है!' (कहानी-संग्रह), लेखिका : डॉ. उषा देव, 2012, मूल्य : 300/- रुपए
33. Birbhadra Karkidholi : The Flight of a Skylark, Ed. Prof. Om Raz, 2017, 300/-
34. 'समय का सच' (कविता-संग्रह), सं. सन्तोष खन्ना, मूल्य : 250/- रुपए
35. भारत में चुनाव, हिंदी की भूमिका और चुनाव सुधार, सं. सन्तोष खन्ना, मूल्य : 250/- रुपए

पुस्तकें मिलने का पता : विधि भारती परिषद्

बी.एच/48 (पूर्वी), शालीमार बाग, दिल्ली-110088

टेलीफोन : 011-27491549, मोबाइल : 9899651872, 9899651272



फोन : 011-27491549  
मोबाइल : 09899651272  
09899651872

### सदस्यता फॉर्म

### विधि भारती परिषद्

बीएच-48 (पूर्वी) शालीमार बाग, दिल्ली-110088

महिला विधि भारती पत्रिका यू.जी.सी. की सूची में भी शामिल है।  
क्रमांक 156, पत्रिका संख्या 48462

कृपया मुझे विधि भारती परिषद् का सदस्य बनाने की कृपा करें। मेरा बैंक/बैंक ड्रॉफ्ट संलग्न है --

- |                                 |                |
|---------------------------------|----------------|
| 1. वार्षिक सदस्य शुल्क          | 450/-- रुपए    |
| 2. आजीवन सदस्य शुल्क            | 4000/-- रुपए   |
| 3. संस्थागत वार्षिक सदस्य शुल्क | 500/-- रुपए    |
| 4. संस्थागत आजीवन सदस्य शुल्क   | 20,000/-- रुपए |

उके % .....

शैक्षिक योग्यता : .....

व्यवसाय : .....

कोई प्रकाशित कृतियाँ : .....

स्थायी पता : .....

फोन (कार्यालय) : ..... (घर) : .....

मोबाइल : ..... ई-मेल : .....

**नोट** : विधि भारती परिषद् की सदस्यता के लिए शुल्क परिषद् के बैंक खाते में जमा कराया जा सकता है। कृपया शुल्क के साथ बैंक सेवा चार्ज 100/-- रुपए जमा कराएँ।

**Vidhi Bharati Parishad** : SBI SB Account No. 10115361055

IFSC Code : SBIN0003702

98 : : महिला विधि भारती / अंक-94